श्री
कुलजम सरूप

निजनाम श्री जी साहिबजी, अनादि अछरातीत ।
सो तो अब जाहेर भए, सब विध वतन सहीत ।।

★ कलस हिन्दुस्तानी-तौरेत ★

राग श्री मारू

सुनियो बानी सोहागनी, हुती जो अकथ अगम ।
सो बीतक कहूँ तुमको, उड़ जासी सब भरम ।।१।।

रास कह्या कछु सुनके, अब तो मूल अंकूर ।
कलस होत सबन को, नूर पर नूर सिर नूर ।।२।।

कथियल तो कही सुनी, पर अकथ न एते दिन ।
सो तो अब जाहेर भई, जो अग्या थें उतपन ।।३।।

मुझे मेहेर मेहेबूबें करी, अंदर परदा खोल ।
सो सुख सनमंधियनसों, कहूं सो दो एक बोल ।।४।।

मासूकें मोहे मिलके, करी सो दिल दे गुझ ।
कहे तूं दे पड़उतर, जो मैं पूछत हों तुझ ।।५।।

तूं कौन आई इत क्योंकर, कहां है तेरा वतन ।
नार तूं कौन खसम की, दृढ़ कर कहो वचन ।।६।।

तूं जागत है के नींद में, करके देख विचार ।
विध सारी याकी कहो, इन जिमी के प्रकार ।।७।।

तब मैं पियासों यों कह्या, जो तुम पूछी बात ।
मैं मेरी मत माफक, कहूंगी तैसी भांत ।।८।।

सुनो पिया अब मैं कहूं, तुम पूछी सुध मंडल ।
ए कहूं मैं क्यों कर, छल बल वल अकल ।।९।।

मैं न पेहेचानों आपको, ना सुध अपनों घर ।
पिउ पेहेचान भी नींद में, मैं जागत हों या पर ॥१०॥

ए मोहोल रच्यो जो मंडप, सो अटक रह्यो अंत्रीख[1] ।
कर कर फिकर कई थके, पर पाई न काहूं रीत ॥११॥

जल जिमी तेज वाए को, अवकास कियो है इंड ।
चौदे तबक चारों तरफों, परपंच खड़ा प्रचंड ॥१२॥

यामें खेल कई होवहीं, सो केते कहूं विचित्र ।
तिमिर तेज रूत रंग फिरे, ससि सूर फिरे नखत्र ॥१३॥

तबक चौदे इंड में, जिमी जोजन कोट पचास ।
साढ़े तीन कोट ता बीच में, होत अंधेरी उजास ॥१४॥

उजास सूर को कहावहीं, सो तो अंधेरी के तिमर ।
तिनथें कछू न सूझहीं, जिमी आप ना घर ॥१५॥

जब थें सूरज देखिए, लेत अंधेरी घेर ।
जीव पसु पंखी आदमी, सब फिरें याके फेर ॥१६॥

काल ना देखें इन फेरे, याही तिमर के फंद ।
ए सूरज आंखों देखिए, पर याही फंद के बंध ॥१७॥

वाओ बादल बीज गाजही, जिमी जल ना समाए ।
ए पांचो आप देखाए के, फेर ना पैदा हो जाए ॥१८॥

या भांत अनेक ब्रह्मांड में, देत देखाई दसों दिस ।
ए मोहजल लेहेरां लेवहीं, सागर सब एक रस ॥१९॥

१. अंतरिक्ष ।

ए कोहेड़ा काली रैन का, कोई न पावे कल मूल ।
कहां कल किल्ली[1] कुलफ[2], जो द्वार पाइए सूल ॥२०॥

ए तीनों लोक तिमर के, लिए जो तीनों ही घेर ।
ए निरखे मैं नीके कर, पर पाईए ना काहूं सेर[3] ॥२१॥

ए अंधेरी इन भांत की, काहूं सांध न सूझे सल ।
ए सुध काहूं न परी, कई गए कर कर बल ॥२२॥

ग्यान लिया कर दीपक, अंधेर आप नहीं गम ।
जोत दीपक इत क्या करे, ए तो चौदे तबकों तम ॥२३॥

ए देखे ही परिए दुख में, कोई व्राध को रचियो रोग ।
छुटकायो छूटे नहीं, नाहीं ना देखन जोग ॥२४॥

टेढ़ी सकड़ी गलियां, तामें फिरे फेर फेर ।
गुन पख अंग इंद्रियां, कियो अंधेरी में अंधेर ॥२५॥

तत्व पांचो जो देखिए, यामें ना कोई थिर ।
प्रले होसी पल में, वैराट सचरा चर ॥२६॥

ए उपजे पांचो मोह थें, और मोह को तो नाहीं पार ।
नेत नेत कहे निगम फिरे, आगे सुध ना परी निराकार ॥२७॥

मूल बिना ए मंडल, नहीं नेहेचल निरधार ।
निकसन कोई न पावहीं, वार न काहूं पार ॥२८॥

पंथ पैंडे कई चलहीं, कई भेख दरसन ।
ता बीच अंधेरी ग्यान की, पावे ना कोई निकसन ॥२९॥

यामें ज्यों ज्यों खोजिए, त्यों त्यों बंध पड़ते जाएं ।
कई उदम[4] जो कीजिए, तो भी तिमर न छोड़े ताए ॥३०॥

इत जुध किए कई सूरमें, पेहेन टोप सिल्हे पाखर ।
बचन बड़ें रन बोल के, सो भी उलट पड़े आखिर ॥३१॥

१. चाबी । २. ताला । ३. रास्ता । ४. प्रयास - कोशिश ।

ए सुध अजूं किन ना परी, बढ़त जात विवाद ।
ए खेल तो है एक खिन का, पर जाने सदा अनाद ॥३२॥

खेल खावंद जो त्रैगुन, जाने याथें जासी फेर ।
ए निरखे मैं नीके कर, अजूं ए भी मिने अंधेर ॥३३॥

ए द्वार कोई खोल के, कबहूं ना निकस्या कोए ।
ए बुजरक जो छल के, बैठे देखे बेसुध होए ॥३४॥

ए जिन बांधे सो खोलहीं, तोलों ना छूटे बंध ।
या विध खेल खावंद की, तो औरों कहा सनंध ॥३५॥

निज बुध आवे अग्याएँ, तोलों ना छूटे मोह ।
आतम तो अंधेर में, सो बुध बिना बल ना होए ॥३६॥

ए तो कही इन इंड की, पिया पूछ्यो जो प्रश्न ।
कहूँ और अजूं बोहोत है, वे भी सुनो वचन ॥३७॥

॥प्रकरण॥१॥चौपाई॥३७॥

प्रकरण खोज का - राग श्री मारू

पिया मैं बोहोत भांत तोको खोजिया, छोड़ धंधा सब और ।
पूछत फिरों सोहागनी, कोई बताओ पिया ठौर ॥१॥

मैं नेक बात याकी कहूं, तुम कारन खोज्या खेल ।
कोई ना कहे मैं देखिया, जिनों नीके कर खोजेल ॥२॥

सास्त्र साधू जो साखियां, मैं देखी सबों की मत ।
पिया सुध काहू में नहीं, कोई न बतावे तित ॥३॥

छोटे बड़े जिन खोजिया, न पाया करतार ।
संसा सब कोई ले चल्या, पर छूटा नहीं विकार ॥४॥

झूठा ए छल कठन, काहूं ना किसी की गम ।
कहां वतन कहां खसम, कौन जिमी कौन हम ॥५॥

ए देखी बाजी छल की, छल की तो उलटी रीत ।
इनमें सीधा दौड़के, कोई ना निकस्या जीत ।।६।।
मैं देख्या दिल विचार के, चितसों अर्थ लगाए ।
इस मंडल में आतमा, चल्या ना कोई जगाए ।।७।।
मेहेनत तो बोहोतों करी, अहनिस खोज विचार ।
तिन भी छल छूटा नहीं, गए हाथ पटक कई हार ।।८।।
मोहादिक के आद लों, जेती उपजी सृष्ट ।
तिन सारों ने यों कह्या, जो किनहूं ना देख्या दृष्ट ।।९।।
वरना वरनो खोजिया, जेती बनिआदम[1] ।
एता दृढ़ किने ना किया, कहां खसम कौन हम ॥१०॥
आद मध[2] और अबलों, सब बोले या विध ।
केवल विदेही हो गए, तिन भी ना कही सुध ॥११॥
वेदों कथ कथ यों कथ्या, सब मिथ्या चौदे लोक ।
बकते बकते यों बके, एक अनेक सब फोक ॥१२॥
बुध तुरिया दृष्ट श्रवना, जहांलों पोहोंचे मन ।
ए होसी उतपन सब फना, जो आवे मिने वचन ॥१३॥
वेदांती भी कहे थके, द्वैत खोजी पर पर ।
अद्वैत सब्द जो बोलिए, तो सिर पड़े उतर ॥१४॥
मन चित बुध श्रवना, पोहोंचे दृष्ट ना सब्दा कोए ।
खट प्रमान थें रहित है, सो दृढ़ कैसे होए ॥१५॥
द्वैत आड़े अद्वैत के, सब द्वैतई को विस्तार ।
छोड़ द्वैत आगे वचन, किने ना कियो निरधार ॥१६॥
ए अलख किनहूं ना लखी, आदै थें अकल ।
ऐसी निराकार निरंजन, व्याप रही सकल ॥१७॥

१. सब मनुष्य जाति - आदम की संतान (बेटे) । २. मध्य ।

चेतन व्यापी व्याप में, सो फेर फेर आवे जाए ।
जड़ को चेतन ए करे, चेतन को मुरछाए ॥१८॥

ऊपर तले मांहें बाहेर, दसो दिसा सब एह ।
छोड़ याको कोई ना कहे, ठौर खसम का जेह ॥१९॥

जो कछू कहिए वचने, सो तो सब अनित ।
वतन सरूप कोई न कहे, तो क्यों कर जाइए तित ॥२०॥

पेड़[1] काली किन न देखी, सब छाया में रहे उरझाए ।
गम छायाकी[2] भी न पड़ी, तो पेड़ पार क्यों लखाए ॥२१॥

ए जाए न उलंघी देखीती, ना कछू होए पेहेचान ।
तो दुलहा कैसे पाइए, जाको नेक ना सुन्यो निसान ॥२२॥

खसम जो न्यारा द्वैत से, और ठौरों सब द्वैत ।
किने ना कह्या ठौर नेहेचल, तो पाइए कैसी रीत ॥२३॥

ए मत वेद वेदांत की, सास्त्र सबों ए ग्यान ।
सो साधू लेकर दौड़हीं, आगे मोह न देवे जान ॥२४॥

या विध ग्यान जो चरचही, सो मैं देख्या चित ल्याए ।
ज्यों मनुआ सुपने मिने, बेसुध गोते खाए ॥२५॥

खिन में कहे सब ब्रह्म है, खिन में बंझा पूत ।
मद माते मरकट ज्यों, करे सो अनेक रूप ॥२६॥

खिन में कहे सत असत, माया कछुए कही न जाए ।
यो संग संसा दृढ़ हुआ, सब धोखे रहे फिराए ॥२७॥

खिन में कहे है आप में, खिन में कहे बाहेर ।
खिन में मांहें न बाहेर, याको शब्द न कोई निरधार ॥२८॥

खिन में कछू और कहे, खिन में और की और ।
सो बात दृढ़ क्यों होवहीं, जाको वचन ना रेहेवे ठौर ॥२९॥

१. मूल (अव्याकृत ब्रह्म के सूक्ष्म में काल निरंजन शरीर) । २. शून्य - निराकार ।

जैसे बालक बावरा, खेले हंसता रोए ।
ऐसे साधू सास्त्र में, दृढ़ ना सब्दा कोए ॥३०॥

ए सब सींग ससिक[१], बंझा पूत वैराट ।
फूल गगन नाम धर के, उड़ाए देवें सब ठाट ॥३१॥

आप होत फूल गगन, बढ़त जात गुमान ।
देखीतां छल छेतरे, हाए हाए ऐसी नार सुजान[२] ॥३२॥

कोई ना परखे छल को, जिन छल में है आप ।
तो न्यारा खसम जो छल थें, सो क्यों पाइए साख्यात ॥३३॥

अटक रहे सब इतहीं, आगे सब्द न पावे सेर[३] ।
ए इंड गोलक बीच में, याके मोह तत्व चौफेर ॥३४॥

सब्द जो सारे मोह लों, एक लवा न निकस्या पार ।
खोज खोज ताही सब्द को, फेर फेर पड़े अंधार[४] ॥३५॥

ए ख्वाबी दम सब नींद लों, ए दम नींदै के आधार ।
जो कदी आगे बल करे, तो गले नींदै में निराकार ॥३६॥

तबक चौदे ख्वाब के, याको पेड़ै नींद निदान ।
नींद के पार जो खसम, सो ए क्यों करे पेहेचान ॥३७॥

बड़ी बुध वाले जो कहावहीं, सो सीतल भए इन भांत ।
ना पेहेचान छल वतन की, सो सुन्य गले ले स्वांत ॥३८॥

ए पुकार साधू सुनके, हट रहे पीछे पाए ।
पार सुध किन ना परी, सब इतहीं रहे उरझाए ॥३९॥

जिनहूं जैसा खोजिया, सो बोले बुध माफक ।
मैं देखे सब्द सबन के, जो गए जाहेर मुख बक ॥४०॥

या बिध तो हुई नास्त, सो नास्त[५] जानो जिन ।
सार सब्द मैं देख के, लिए सो दृढ़ कर मन ॥४१॥

१. खरगोश । २. चतुर । ३. रास्ता । ४. अंधकार, माया । ५. नाबूद, नाशवंत ।

जिन जानो पाया नहीं, है पावनहार प्रवान ।
सो ए छिपे इन छल थें, वाकी मिले न कासों तान ॥४२॥

सो तो प्रेमी छिप रहे, वाको होए गयो सब तुच्छ ।
ओ खेले पिया के प्रेम में, और भूल गए सब कुछ ॥४३॥

सुरत न वाकी छल में, वाही तरफ उजास ।
प्रेमै में मगन भए, और होए गयो सब नास ॥४४॥

प्रेमी तो नेहेचे छिपे, उन मुख बोल्यो न जाए ।
सब्द कदी जो निकसे, सो ग्यानी क्यों समझाए ॥४५॥

सब्द जो सीधे प्रेम के, सास्त्र तो स्यानप छल ।
या विध कोई ना समझहीं, बात पड़ी है वल ॥४६॥

साधू सास्त्र जो बोलहीं, सो तो सुनता है संसार ।
पर मूल माएने गुझ हैं, सोई गुझ सब्द हैं पार ॥४७॥

सब कोई देखे सास्त्र को, सास्त्र तो गोरख धंध ।
मूल कड़ी पाए बिना, तोलो देखीता ही अंध ॥४८॥

ऐसा तो कोई न मिल्या, जो दोनों पार प्रकास ।
मगन पिया के प्रेम में, उधर भी उजास ॥४९॥

जो कोई ऐसा मिले, सो देवे सब सुध ।
सब्दें सब समझावहीं, कहे वतन की विध ॥५०॥

कड़ी बतावे मूल की, सास्त्र निकाले वल ।
ठौर खसम सब केहेवहीं, जो है सदा नेहेचल ॥५१॥

आप ओलखावे आप में, आप पुरावे साख ।
आतम को परआतमा, नजरों आवे साख्यात ॥५२॥

और सब्द भी हैं सही, पिया करसी परदा दूर ।
सब मिल कदमों आवसी, तब हम पिया हजूर ॥५३॥

आगम की बानी कहे, पिया आवेंगे तेहेकीक ।
तिन आसा मेरी बंधी, पूरन आई परतीत[1] ॥५४॥
मन चित बुध दृढ़ किया, पिया न करें निरास ।
महामत नेहेंचें कहें, होसी दुलहे सों विलास ॥५५॥

॥प्रकरण॥२॥चौपाई॥९२॥

विरह तामस का प्रकरण - राग सिंधूड़ो कड़खा

मैं चाहत न स्वांत इन भांत,
अजूं आउध अंग चले, इन नैनों दोनों नेक न आवे नीर ।
दरद देहा जरद गरद रद करे, मैं क्यों धरूं धीर अस्थिर[2] सरीर ॥१॥
कठिन निपट विकट घाटी प्रेम की, त्रबंक[3] बंको सूरो किनों न अगमाए ।
धार तरवार पर सचर सिनगार कर, सामी अंग सांगा रोम रोम भराए ॥२॥
सागर नीर खारे लेहेरां मार मारे फिरें, बेटो[4] बीच बेसुध पछाड़ खावे ।
खेलें मछ मिले गलें ले उछाले, संधो संध बंधे अंधों यों जो भावे ॥३॥
दाहो दसे दसों दिस सबे धखे, लाल झालां चले इंड न झलाए ।
फोड़ आकास फिरे सिर सिखरों, ए फलंग उलंघ संग खसम मिलाए ॥४॥
घाट अवघाट सिलपाट[5] अति सलवली[6], तहां हाथ ना टिके पपील[7] पाए ।
वाओ वाए बढ़े आग फैलाए चढ़े, जले पर अनलें[8] ना चले उड़ाए ॥५॥
पेहेन पाखर[9] गज[10] घंट बजाए चल, पैठ[11] सकोड़ सुई नाके समाए ।
डार आकार संभार जिन ओसरे[12], दौड़ चढ़ पहाड़ सिर झांप खाए ॥६॥
बोहोत बंध फंद धंध अजूं कई बीच में, सो देखे अलेखे मुख भाख न आवे ।
निराकार सुन्य पार के पार पिउ वतन, इत हुकम हाकिम बिना कौन आवे ॥७॥
मन तन वचन लगे तिन उतपन, आस पिया पास बांध्यो विस्वास ।
कहे महामती इन भांत तो रंग रती, दई पिया अग्या जाग करूं विलास ॥८॥

॥प्रकरण॥३॥चौपाई॥१००॥

१. विश्वास । २. क्षण भंगुर । ३. तीन बल वाली । ४. टापू । ५. चट्टान । ६. चिकनी । ७. कीड़ी ।
८. अगनी में, अगल पक्षी । ९. लोहे की झूल । १०. हाथी । ११. घुसना । १२. भूलना ।

राग श्री सामेरी

पिया मोहे स्वांत न आवहीं, ना कछू नैनों नीर ।
पिया बिना पल जो जात है, अहनिस धखे सरीर ।।१।।

सब अंग अगनी जलके, जात उड़े ज्यों गरद ।
क्यों इत स्वांत जो आवहीं, जित दुलहे का दरद ।।२।।

हाड़े हाड़ पिसात हैं, चकी बीच जिन भांत ।
आराम ना जीवरा होवहीं, तो क्यों कर उपजे स्वांत ।।३।।

सब अंग सारन[१] होए के, सारे[२] सकल संधान ।
अपनी इंद्री आप को, उलट लगी है खान ।।४।।

उड़ी जो नींद अंदर की, पड़त न क्यों ही चैन ।
प्यारी पिउ के दरस की, कब देखूं मुख नैन ।।५।।

पिया बिन कछुए न भावहीं, जानूं कब सुनों पिया बैन ।
जोलों पिउ मुझे ना मिले, तोलों तलफत हों दिन रैन ।।६।।

घाटी टेढ़ी सकड़ी, तीखी खांडा धार ।
रोम रोम सांगा[३] सामिया[४], तामें चढ़ूं कर सिनगार ।।७।।

नीर खारे भवसागर, और लेहेरां मारे मार ।
बेटो[५] बीच पछाड़हीं, वार न काहूं पार ।।८।।

तान तीखे आड़े उलटे, और लेत भमरियां जल ।
मिने मछ लड़ाइयां, यामें लेवें सारे निगल ।।९।।

ए दुनी दिल अंधी दिवानी, और बंधी संधों संध ।
हाथों हाथ न सूझहीं, तिमर तो या सनंध ॥१०॥

धखत दाह दसो दिस, झालां इंड न समाए ।
फोड़ आकास पर फिरे, किन जाए ना उलंघी ताए ॥११॥

१. दुश्मन । २. छेदना । ३. भाला । ४. चुभना । ५. टापू (किनारा) ।

घाट पाट अति सलवली[१], तहां हाथ न टिके पपील[२] पाए ।
पवने अगनी पर जले, किन चढ़्यो न उड़्यो जाए ॥१२॥

इत चल तूं हस्ती होए के, पेहेन पाखर गज घंट बजाए ।
पैठ सकोड़ सुई नाके मिने, जिन कहूं अंग अटकाए ॥१३॥

दीजे न आल[३] आकार को, पिउ मिलना अंग इन ।
दौड़ चढ़ पहाड़ झांप खा, कायर होवे जिन ॥१४॥

बोहोत फंद बंध धंध कई, कई कोटान लाखों लाख ।
अंदर नजरों आवही, पर मुख न देवे भाख ॥१५॥

आड़े चौदे तबक मोह, निराकार निरंजन ।
याके पार पोहोंचना, इन पार पिउ वतन ॥१६॥

पाँउ चले ना पर उड़े, बीच तो ऐसे पंथ ।
पर ए सब तोलों देखिए, जोलों ना दृष्टें कंथ ॥१७॥

आतम बंधी आस पिया, मन तन लगे वचन ।
कहे महामती कौन आवहीं, इत हुकम खसम के बिन ॥१८॥

॥प्रकरण॥४॥चौपाई॥११८॥

विरह के प्रकरण - राग देसांकी

तलफे तारूनी रे, दुलही[४] को दिल दे ।
सनमंध मूल जानके रे, सेज सुरंगी पर ले ॥१॥

सब तन विरहे खाइया, गल गया लोहू मांस ।
न आवे अंदर बाहेर, या विध सूकत स्वांस ॥२॥

हाड़ हुए सब लकड़ी, सिर श्रीफल[५] विरह अगिन ।
मांस मीज लोहू रगां, या विध होत हवन ॥३॥

रोम रोम सूली सुगम, खंड खंड खांडा धार ।
पूछ पिया दुख तिनको, जो तेरी विरहिन नार ॥४॥

१. चिकनी । २. कीड़ी । ३. आलस । ४. अंगना । ५. नारियल ।

ए दरद जाने सोई, जिन लगे कलेजे घाव ।
ना दारू इन दरद का, फेर फेर करे फैलाव ।।५।।

ए दरद तेरा कठिन, भूखन लगे ज्यों दाग ।
हेम हीरा सेज पसमी, अंग लगावे आग ।।६।।

विरहिन होवे पिउ की, वाको कोई ना उपाए ।
अंग अपने वैरी हुए, सब तन लियो है खाए ।।७।।

ए लछन तेरे दरद के, ताए गृह आँगन[1] न सुहाए ।
रतन जड़ित जो मंदिर, सो उठ उठ खाने धाए ।।८।।

ना बैठ सके विरहनी, सोए सके ना रोए ।
राजप्रथी[2] पाँउ दाब के, निकसी या विध होए ।।९।।

विरहा ना देवे बैठने, उठने भी ना दे ।
लोट पोट भी ना कर सके, हूक हूक स्वांस ले ॥१०॥

आठों जाम विरहनी, स्वांस लिए हूक हूक ।
पत्थर काले ढिग हुते, सो भी हुए टूक टूक ॥११॥

एह विध मोहे तुम दई, अपनी अंगना जान ।
परदा बीच टालने, ताथें विरहा परवान ॥१२॥

।।प्रकरण।।५।।चौपाई।।१३०।।

राग धना मेवाड़

विरहा गत रे जाने सोई, जो मिलके बिछुरी होए, मेरे दुलहा ।
ज्यों मीन बिछुरी जलथें, या गत जाने सोए, मेरे दुलहा ।
विरहनी विलखे तलफे तारूनी, तारूनी तलफे कलपे कामनी ।।१।।

बिछरो तेरो वल्लभा, सो क्यों सहे सुहागिन ।
तुम बिना पिंड ब्रह्मांड, हो गई सब अगिन ।।२।।

१. आंगन, चौक । २. पृथ्वी का राज्य ।

विरहा जाने विरहनी, वाके आग ना अंदर समाए।
सो झालां बाहेर पड़ी, तिन दियो वैराट लगाए।।३।।

विरहा ना छूटे वल्लभा, जो पड़े विघन अनेक।
पिंड ना देखों ब्रह्मांड, देखो दुलहा अपनो एक।।४।।

विरहनी विरहा बीच में, कियो सो अपनों घर।
चौदे तबक की साहेबी, सो वारूं तेरे विरहा पर।।५।।

आंधी आई विरह की, तिन दियो ब्रह्मांड उड़ाए।
विरहिन गिरी सो उठ ना सकी, मूल अंकूर रही भराए।।६।।

विरहा सागर होए रह्या, बीच मीन विरहनी नार।
दौड़त हों निसवासर, कहूं बेट ना पाऊं पार।।७।।

।।प्रकरण।।६।।चौपाई।।१३७।।

राग सोख मलार

इस्क बड़ा रे सबन में, ना कोई इस्क समान।
एक तेरे इस्क बिना, उड़ गई सब जहान।।१।।

चौदे तबक हिसाब में, हिसाब निरंजन सुंन।
न्यारा इस्क हिसाब थें, जिन देख्या पिउ वतन।।२।।

लोक अलोक हिसाब में, हिसाब जो हद बेहद।
न्यारा इस्क जो पिउ का, जिन किया आद लों रद।।३।।

एक अनेक हिसाब में, और निराकार निरगुन।
न्यारा इस्क हिसाब थें, जो कछू ना देखे तुम बिन।।४।।

और इस्क कोई जिन कथो, इस्कें ना पोहोंच्या कोए।
इस्क तहां जाए पोहोंचिया, जहां सुन्य सब्द ना होए।।५।।

नाहीं कथनी इस्क की, और कोई कथियो जिन।
इस्क तो आगे चल गया, सब्द समाना सुंन।।६।।

सब्द जो सूकया अंग में, हले नहीं हाथ पाए ।
इस्क बेसुध न करे, रही अंदर बिलखाए ।।७।।

पांपण पल ना लेवही, दसो दिस नैन फिराऊं ।
देह बिना दौड़ो अन्दर, पिया कित मिलसी कहां जाऊं ।।८।।

इस्क को ए लछन, जो नैनों पलक ना ले ।
दौड़े फिरे न मिल सके, अन्दर नजर पिया में दे ।।९।।

नजरों निमख ना छूटहीं, तो नाहीं लागत पल ।
अन्दर तो न्यारा नहीं, पर जाए न दाह बिना मिल ।।१०।।

जो दुख तुमहीं विछुरे, मोहे लाग्यो जो तासों प्यार ।
एता सुख तेरे विरह में, तो कौन सुख होसी विहार ।।११।।

।।प्रकरण।।७।।चौपाई।।१४८।।

राग श्री धना काफी

सनमंध मूल को, मैं तो पाव पल छोड़्यो न जाए ।
अब छल बल मोहे कहा करे, मोह आद थें दियो उड़ाए ।।१।।

दरद जो तेरे दुलहा, कर डार्यो सब नास ।
पर आस ना छोड़े जीव को, करने तुम विलास ।।२।।

विरहा न छोड़े जीव को, जीव आस भी पिउ मिलन ।
पिया संग इन अंगे करूं, तो मैं सुहागिन ।।३।।

लागी लड़ाई आप में, एक विरहा दूजी आस ।
ए भी विरहा पिउ का, आस भी पिउ विलास ।।४।।

मैं कहावत हों सुहागनी, जो विरहा ना देऊं जिउ ।
तो पीछे वतन जाए के, क्यों देखाउं मुख पिउ ।।५।।

जो जीव देते सकुचों, तो क्यों रहे मेरा धरम ।
विरहा आगे कहा जीव, ए केहेत लगत मोहे सरम ।।६।।

माया काया जीवसों, भान भून टूक कर।
विरहा तेरा जिन दिसा, मैं वारूं तिन दिस पर ।।७।।

जब आह सूकी अंग में, स्वांस भी छोड़्यो संग।
तब तुम परदा टालके, दियो मोहे अपनो अंग ।।८।।

मैं तो अपना दे रही, पर तुम ही राख्यो जिउ।
बल दे आप खड़ी करी, कारज अपने पिउ ।।९।।

जीवरा भी मेरा रख्या, तुम कारज भी कारन।
आस भी पूरी सुहागनी, और व्रध[1] भी राख्यो विरहिन ॥१०॥

तुम आए सब आइया, दुख गया सब दूर।
कहे महामती ए सुख क्यों कहूं, जो उदया मूल अंकूर ॥११॥

।।प्रकरण।।८।।चौपाई।।१५९।।

विरह को प्रकास - राग आसावरी

एह बात मैं तो कहूं, जो कहने की होए।
पर ए खसमें रीझ के, दया करी अति मोहे ।।१।।

सुनियो बानी सुहागनी, दीदार दिया पिउ जब।
अंदर परदा उड़ गया, हुआ उजाला सब ।।२।।

पिया जो पार के पार हैं, तिन खुद खोले द्वार।
पार दरवाजे तब देखे, जब खोल देखाया पार ।।३।।

कर पकर बैठाए के, आवेस दियो मोहे अंग।
ता दिन थें पसरी दया, पल पल चढ़ते रंग ।।४।।

हुई पेहेचान पिउसों, तब कह्यो महामती नाम।
अब मैं हुई जाहेर, देख्या वतन श्री धाम ।।५।।

बात कही सब वतन की, सो निरखे मैं निसान।
प्रकास पूरन दृढ़ हुआ, उड़ गया उनमान ।।६।।

१. लाज, टेक ।

आपा मैं पेहेचानिया, सनमंध हुआ सत ।
ए मेहेर कही न जावहीं, सब सुध परी उतपत ।।७।।

मुझे जगाई जुगतसों, सुख दियो अंग आप ।
कंठ लगाई कंठसों, या विध कियो मिलाप ।।८।।

खासी जान खेड़ी जिमी, जल सींचिया खसम ।
बोया बीज वतन का, सो ऊग्या वाही रसम ।।९।।

बीज आतम संग निज बुध के, सो ले उठिया अंकूर ।
या जुबां इन अंकूर को, क्यों कर कहूं सो नूर ॥१०॥

नातो ए बात जो गुझ की, सो क्यों होए जाहेर ।
सोहागिन प्यारी मुझ को, सो कर ना सकों अंतर ॥११॥

नेक कहूं या नूर की, कछुक इसारत अब ।
पीछे तो जाहेर होएसी, तब दुनी देखसी सब ॥१२॥

ए जो विरहा बीतक कही, पिया मिले जिन सूल ।
अब फेर कहूं प्रकास थें, जासों पाइए माएने मूल ॥१३॥

ए विरहा लछन मैं कहे, पर नाहीं विरहा ताए ।
या विध विरह उदम[1] की, जो कोई किया चाहे ॥१४॥

विरह सुनते पिउ का, आह ना उड़ गई जिन ।
ताए वतन सैयां यों कहें, नाहीं न ए विरहिन ॥१५॥

जो होवे आपे विरहनी, सो क्यों कहे विरहा सुध ।
सुन विरहा जीव ना रहे, तो विरहिन कहां थें बुध ॥१६॥

पतंग कहे पतंग को, कहां रह्या तूं सोए ।
मैं देख्या है दीपक, चल देखाऊं तोहे ॥१७॥

के तो ओ दीपक नहीं, या तूं पतंग नाहें ।
पतंग कहिए तिनको, जो दीपक देख झंपाए ॥१८॥

१. मेहनत, उपाय ।

पंतग और पतंग को, जो सुध दीपक दे ।
तो होवे हांसी तिन पर, कहे नाहीं पतंग ए ॥१९॥

दीपक देख पीछा फिरे, साबित राखे अंग ।
आए देवे सुध और को, सो क्यों कहिए पतंग ॥२०॥

जब मैं हुती विरह में, तब क्यों मुख बोल्यो जाए ।
पर ए वचन तो तब कहे, जब लई पिया उठाए ॥२१॥

ज्यों ए विरहा उपज्या, ए नहीं हमारा धरम ।
विरहिन कबहूं ना करे, यों विरहा अनूकरम[1] ॥२२॥

विरहा नहीं ब्रह्मांड में, बिना सोहागिन नार ।
सोहागिन आतम पिउ की, वतन पार के पार ॥२३॥

अब कहूं नेक अंकूर की, जाए कहिए सोहागिन ।
सो विरहिन ब्रह्मांड में, हुती ना एते दिन ॥२४॥

सोई सुहागिन आइयां, खसम की विरहिन ।
अंतरगत पिया पकरी, ना तो रहे ना तन ॥२५॥

ए सुध पिया मुझे दई, अन्दर कियो प्रकास ।
तो ए जाहेर होत है, जो गयो तिमर सब नास ॥२६॥

प्यारी पिया सोहागनी, सो जुबां कही न जाए ।
पर हुआ जो मुझे हुकम, सो कैसे कर ढंपाए ॥२७॥

अनेक करहीं बंदगी, अनेक विरहा लेत ।
पर ए सुख तिन सुपने नहीं, जो हमको जगाए के देत ॥२८॥

छलथें मोहे छुड़ाए के, कछू दियो विरहा संग ।
सो भी विरहा छुड़ाइया, देकर अपनों अंग ॥२९॥

अंग बुध आवेस देए के, कहे तूं प्यारी मुझ ।
देने सुख सबन को, हुकम करत हों तुझ ॥३०॥

१. दिखावा करना ।

दुख पावत हैं सोहागनी, सो हम सह्यो न जाए ।
हम भी होसी जाहेर, पर तूं सोहागनियां जगाए ॥३१॥

सिर ले आप खड़ी रहो, कहे तूं सब सैयन ।
प्रकास होसी तुझ से, दृढ़ कर देखो मन ॥३२॥

तोसों ना कछू अन्तर, तूं है सोहागिन नार ।
सत सब्द के माएने, तूं खोलसी पार द्वार ॥३३॥

जो कदी जाहेर न हुई, सो तुझे होसी सुध ।
अब थें आद अनाद लों, जाहेर होसी निज बुध ॥३४॥

सब ए बातें सूझसी, कहूं अटके नहीं निरधार ।
हुकम कारन कारज, पार के पारै पार ॥३५॥

चौदे तबक एक होएसी, सब हुकम के प्रताप ।
ए सोभा होसी तुझे सोहागनी, जिन जुदी जाने आप ॥३६॥

जो कोई सब्द संसार में, अर्थ ना लिए किन कब ।
सो सब खातिर सोहागनी, तूं अर्थ करसी अब ॥३७॥

तूं देख दिल विचार के, उड़जासी सब असत ।
सारों के सुख कारने, तूं जाहेर हुई महामत ॥३८॥

पेहेले सुख सोहागनी, पीछे सुख संसार ।
एक रस सब होएसी, घर घर सुख अपार ॥३९॥

ए खेल किया जिन खातिर, सो तूं कहियो सोहागिन ।
पेहेले खेल दिखाए के, पीछे मूल वतन ॥४०॥

अंतर सैयों से जिन करे, जो सैयां हैं इन घर ।
पीछे चौदे तबक में, जाहिर होसी आखिर ॥४१॥

तें कहे वचन मुख थें, होसी तिनथें प्रकास ।
असत उड़सी तूल ज्यों, जासी तिमर सब नास ॥४२॥

तूं लीजे नीके माएने, तेरे मुख के बोल ।
जो साख देवे तुझे आतमा, तो लीजे सिर कौल ॥४३॥

खसम खड़ा है अंतर, जेती सोहागिन ।
तूं पूछ देख दिल अपना, कर कारज दृढ़ मन ॥४४॥

आप खसम अजूं गोप है, आगे होत प्रकास ।
उदया सूर छिपे नहीं, गयो तिमर सब नास ॥४५॥

॥प्रकरण॥९॥चौपाई॥२०४॥

राग श्री

सत असत पटंतरो, जैसे दिन और रात ।
सत सूरज सब देखहीं, जब प्रगट भयो प्रभात ॥१॥

जोलों पिउ परदे मिने, विश्व विगूती तब ।
सो परदा अब खोलिया, एक रस होसी अब ॥२॥

जोलों जाहिर ना हुते, तब इत उपज्या क्रोध ।
जब प्रगटे तब मिट गया, सब दुनियां को व्रोध ॥३॥

ए प्रकास खसम का, सो कैसे कर ढंपाए ।
छल बल वल जो उलटे, सो देवे सब उड़ाए ॥४॥

दुनियां टेढ़ी मूल की, सो पेड़ से निकालूं वल ।
पिया प्रकास जो खिन में, सीधा करूं मंडल ॥५॥

सत जो ढांप्या ना रहे, उड़ाय दियो अंधेर ।
नूर पिया पसरे बिना, क्यों मिटे दुनियां फेर ॥६॥

अब अंधेर कछू ना रह्या, जाहेर हुआ उजास ।
तबक चौदे खसम का, प्रगट भया प्रकास ॥७॥

जोलों तिमर ना उड़े, तोलों सृष्ट न होवे एक ।
तिमर तीनों लोक का, उड़ाए दिया उठ देख ॥८॥

ए प्रकास है अति बड़ा, सो राखत हों अजूं गोप ।
जिन कोई ना सहे सके, ताथें हलके करूं उद्दोत ।।९।।

ए जो सब्द खसम के, जिन तुम समझो और ।
आद करके अबलों, किन कह्या ना पिया ठौर ॥१०॥

ए अकथ केहेनी खसम की, काहूं ना कथियल कोए ।
जो किनका कथियल कहूं, तो पिया वतन सुध क्यों होए ॥११॥

केतेक ठौरों सोहागनी, तिन सब ठौरों उजास ।
पर जब इत थें जोत पसरी, तब ओ ले उठसी प्रकास ॥१२॥

कोई दिन राखत हों गुझ, सो भी सैयों के सुख काज ।
जब सैयां सबे मिलीं, तब रहे ना पकरयो अवाज ॥१३॥

क्यों रहे प्रकास पकरयो, एह जोत अति जोर ।
जब सब उजाला इत आईया, तब गई रैन भयो भोर ॥१४॥

मैं अबला अरधांग हों, पिउ की प्यारी नार ।
सब जगाऊं सोहागनी, तो मुझे होए करार ॥१५॥

सैयों को वतन देखावने, उलसत मेरे अंग ।
करने बात खसम की, मावत नहीं उमंग ॥१६॥

नए नए रंग सोहागनी, आवत हैं सिरदार ।
खेल जो होसी जागनी, नाहीं इन सुख को पार ॥१७॥

जो पिउ प्यारी आवत, ताको गुझ राखों उजास ।
बाट देखों और सैयन की, सब मिल होसी विलास ॥१८॥

ए उजास इन भांत का, जो कबूं निकसी किरन ।
तो पसरसी एक पल में, चारों तरफों सब धरन ॥१९॥

बात बड़ी इन खसम की, सो क्यों कर ढापूं अब ।
सुख लेने को या समें, पीछे दुनियां मिलसी सब ॥२०॥

ए प्रकास जो पिउ का, टाले अंदर का फेर ।
याही सब्द के सोर से, उड़ जासी सब अंधेर ॥२१॥

और बेर अब कछू नहीं, गयो तिमर सब नास ।
होसी सब में आनंद, चौदे तबक प्रकास ॥२२॥

॥प्रकरण॥१०॥चौपाई॥२२६॥

सोहागनियों के लछन

पार वतन जो सोहागनी, ताकी नेक कहूं पेहेचान ।
जो कदी भूली वतन, तो भी नजर तहां निदान ॥१॥

आसिक प्यारी पिउ की, कोई प्रेम कहो विरहिन ।
ताए कोई दरदन कहो, ए लछन सोहागिन ॥२॥

रूह खसम की क्यों रहे, आप अपने अंग बिन ।
पर पकरी पिया ने अंतर, नातो रहे ना तन ॥३॥

ऊपर काहूं ना देखावहीं, जो दम ना ले सके खिन ।
सो प्यारी जाने या पिया, या विध अनेक लछन ॥४॥

आकीन ना छूटे सोहागनी, जो परे अनेक विघन ।
प्यारी पिउ के कारने, जीव को ना करे जतन ॥५॥

रेहेवे निरगुन होए के, और आहार भी निरगुन ।
साफ दिल सोहागनी, कबहूं ना दुखावे किन ॥६॥

ओ खोजे अपने आप को, और खोजे अपनो घर ।
और खोजे अपने खसम को, और खोजे दिन आखिर ॥७॥

खोज सोहागिन ना थके, जोलों पार के पारै पार ।
नित खोजे चरनी[1] चढ़े, नए नए करे विचार ॥८॥

खोज खोज और खोजहीं, आद के आद अनाद ।
पल पल सब्द प्रकास हीं, श्रवणों एही स्वाद ॥९॥

१. कदम - दर - कदम सीढ़ी चढ़ना ।

सोहागिन तोलों खोज हीं, जोलों पाइए पिउ वतन ।
पिउ वतन पाए बिना, विरहा न जाए निसदिन ॥१०॥

ओतो आगे अंदर उजली, खिन खिन होत उजास ।
देह भरोसा ना करे, पिया मिलन की आस ॥११॥

विचार विचार विचारहीं, बेधे सकल संधान ।
रोम रोम ताए भेदहीं, सत सब्द के बान ॥१२॥

पार वतन के सब्द, अंग में जो निकसे फूट ।
गलित गात सब भीगल, पिया सब्दें होए टूक टूक ॥१३॥

खिन खेले खिन में हंसे, खिन में गावे गीत ।
खिन रोवे सुध ना रहे, ए सोहागिन की रीत ॥१४॥

पिउ बातें खेलें हंसे, गीत पिया के गाए ।
रोवें उरझे पिउ की, बातनसों मुरछाए[1] ॥१५॥

सोहागिन विरहा ना सहे, जब जाहेर हुए पिउ ।
सोहागिन अंग जो पिउ की, पिउ सोहागिन अंग जिउ ॥१६॥

जोलों पिउ सुध ना हुती, सोहागिन अंग में पिउ ।
जब पिया जाहेर हुए, तब ले खड़ी अंग जिउ ॥१७॥

जो होए सैयां सोहागनी, सो निरखो अपने निसान ।
वचन कहे मैं जाहेर, सोहागनियों पेहेचान ॥१८॥

बोहोत निसानी और हैं, प्रेम सोहागिन गुझ ।
जब सैयां जाहिर हुई, तब होसी सबों सुझ ॥१९॥

तुम हो सैयां सोहागनी, ए समझ लीजो दिल बूझ ।
जब सैयां भेली भई, तब होसी बड़ा गूझ ॥२०॥

ए सब्द जो कहती हों, सो कारन सब सैयन ।
सोहागिन ढांपी ना रहे, सुनते एह वचन ॥२१॥

१. बेहोश होना (धनी में तन्मय रहना) ।

ए सब्द सुन सोहागनी, रहे ना सके एक पल ।
तामें मूल अंकूर को, रहे ना पकड़्यो बल ॥२२॥
जब खसम की सुध सुनी, तब रहे ना सोहागिन ।
ख्वाबी दम भी ना रहे, तो क्यों रहे सैयां चेतन ॥२३॥
मैं तुमको चेतन करूं, एही कसौटी तुम ।
या विध सब सैयन का, तसीहा[1] लेवें खसम ॥२४॥
जो हुकम सिर लेय के, उठी ना अंग मरोर ।
पिया सैयां सब देखहीं, तुम इस्क का जोर ॥२५॥
जो सुनके दौड़ी नहीं, तो हांसी है तिन पर ।
जैसा इस्क जिन पे, सो अब होसी जाहिर ॥२६॥
जो इस्क ले मिलसी, सो लेसी सुख अपार ।
दरद बिना दुख होएसी, सो जानों निरधार ॥२७॥
जो किने गफलत करी, जागी नहीं दिल दे ।
सो इत लोक अलोक का, कछू न लाहा ले ॥२८॥
लाहा तो ना लेवहीं, पर सामी हांसी होए ।
अब ए हांसी सोहागनी, जिन कराओ कोए ॥२९॥
जिन उपजे सैयन को, इन हांसी का भी दुख ।
ए दुख बुरा सोहागनी, जो याद आवे मिने सुख ॥३०॥
ए दुख तो नेहेचे बुरा, मेरी सैयोंपे सह्यो न जाय ।
जो कदी हांसी ना करे, पर जिन हिरदे चढ़ आए ॥३१॥
जिन जुबां मैं दुख कहूं, सोए करूं सत[2] टूक ।
पर ए दुख जिन तुमें लागहीं, तो मैं करत हों कूक ॥३२॥
जो दुख मेरी सैयन को, तब सुख कैसा मोहे ।
हम तुम एक वतन के, अपनी रूह नहीं दोए ॥३३॥

॥प्रकरण॥११॥चौपाई॥२५९॥

१. परीक्षा । २. शत, सौ ।

भी कहूं मेरी सैयन को, जो हैं मूल अंकूर ।
सो निज वतनी सोहागनी, पिया अंग निज नूर ।।१।।

पार पुरुख पिया एक है, दूसरा नाहीं कोए ।
और नार सब माया, यामें भी विध दोए ।।२।।

जो रूह असलू ईश्वरी, दूजी रूह सब जहान ।
पर रूह न्यारी सोहागनी, सो आगे कहूंगी पेहेचान ।।३।।

सैयां सुख निज वतनी, ईश्वरी को सुख और ।
दुनी भी सुख होसी सदा, आगे कहूंगी तीनों ठौर ।।४।।

ए लछन सैयां अंकूरी, जो होसी इन घर ।
ए वचन वतनी सुनके, आवत हैं तत्पर ।।५।।

अटक रह्या साथ आधा, जिनो खेल देखन का प्यार ।
ए किया मूल इन खातिर, जो हैं तामसियां नार ।।६।।

भूल गइयां खेल में, जो सैयां हैं समरथ ।
प्रकास पिया का मुझ पे, कहे समझाऊं अर्थ ।।७।।

सबन को भेली करूं, दृढ़ कर देऊं मन ।
खेल देखाऊं खोल के, जिन विध ए उतपन ।।८।।

ए खेल है जोरावर, बड़ो सो रचियो छल ।
ए तब जाहेर होएसी, जब काढ़ देखाऊं बल ।।९।।

तुम नाहीं इन छल के, छल को जोर अमल ।
सांची को झूठी लगी, ऐसो छल को बल ॥१०॥

तुम आइयां छल देखने, भिल[1] गैयां मांहें छल ।
छल को छल न लागहीं, ओ लेहेरी ओ जल ॥११॥

ए झूठी तुमको लग रही, तुम रहे झूठी लाग ।
ए झूठी अब उड़ जाएसी, दे जासी जूठा दाग ॥१२॥

१. मिल ।

हांसी होसी अति बड़ी, जिन मोहे देओ दोस ।
कमी कहे मैं ना करूं, पर तुमें छल हुआ सिरपोस ॥१३॥

मांग लिया खसम पें, ए छल तुम देखन ।
जो कदी भूलियां छल में, तो फेर न आवे ए दिन ॥१४॥

तुम मुख नीचा होएसी, आगूं सैयां सबन ।
ए हांसी सत ठौर की, कोई सैयां कराओ जिन ॥१५॥

दुख ले चलसी इत थें, नहीं आवन दूजी बेर ।
तिन क्यों मुख ऊंचा होएसी, जो पिउसों बैठी मुख फेर ॥१६॥

तुम सुध पिउ ना आपकी, ना सुध अपनों घर ।
नाहीं सुध इन छल की, सो कर देऊं सब जाहेर ॥१७॥

मैं देखाऊं तिन विध, ज्यों होए पेहेचान छल ।
जब तुम छल पेहेचानिया, तब चले न याको बल ॥१८॥

अब देखो या छल को, जो देखन आइयां एह ।
प्रकास करूं इन भांत का, ज्यों रहेवे नहीं संदेह ॥१९॥

अन्धेर सब उड़ाए के, सब छल करूं जाहेर ।
खोलूं कमाड़ कल[1] कुलफ[2], अन्तर मांहें बाहेर ॥२०॥

॥प्रकरण॥१२॥चौपाई॥२७९॥

खेल के मोहोरों का प्रकरण

अब निरखो नीके कर, ए जो देखन आइयां तुम ।
मांग्या खेल हिरस[3] का, सो देखलावें खसम ॥१॥

भोम भली भरतखंड की, जहां आई निध नेहेचल ।
और सारी जिमी खारी, खारे जल मोह जल ॥२॥

इत बोए बिरिख[4] होत है, ताको फल पावे सब कोए ।
बीज जैसा फल तैसा, किया जो अपना सोए ॥३॥

१. ताले की गुप्त कला । २. ताला । ३. माया (तृष्णा से भरा) । ४. वृक्ष ।

इनमें जो ठौर अव्वल, जाको नाम नौतन ।
जहां आए उदय हुई, नेहेचल बात वतन ।।४।।

एह खेल तुम मांगिया, सो किया तुम खातिर ।
ए विध सब देखाए के, पीछे कहूं वतन आखिर ।।५।।

मोहोरे सब जुदे जुदे, जुदी जुदी मुख बान ।
खेले मन के भाव तें, सब आप अपनी तान ।।६।।

स्वांग काछें जुदे जुदे, जुदे जुदे रूप रंग ।
चलें आप चित चाहते, और रहे जो भेले संग ।।७।।

अनेक सेहेर बाजार चौहटे, चौक चौवटे अनेक ।
अनेक कसबी[1] कसब करते, हाट पीठ वसेक ।।८।।

भेख सारे बनाए के, करें होहोकार ।
कोई मिने आहार खाए, कोई खाए अहंकार ।।९।।

बिध बिध के भेख काछे, सारे जान प्रवीन ।
वरन चारों खेलें चित दे, नाहीं न कोई मतहीन ॥१०॥

पढ़े चारों विद्या चौदे, हुए वरन विस्तार ।
आप चंगी[2] सब दुनियां, खेलत हैं नर नार ॥११॥

वरन सारे पसरे, लोभें लिए करें उपाय ।
बिना अगनी पर जले, अंग काम क्रोध न माय ॥१२॥

नाहीं जासों पेहेचान कबहूं, तासों करे सनमंध ।
सगे सहोदरे मिलके, ले देवें मन के बंध ॥१३॥

सनमंध करते आप में, उछरंग अंग न माए ।
केसर कसूंबे पेहेर के, सेहेर में फेरे खाए ॥१४॥

सिनगार करके तुरी चढ़े, कोई करे छाया छत्र ।
कोई आगे नाटारंभ करे, कोई बजावे बाजंत्र ॥१५॥

१. कारीगर एवं व्यापारी । २. अच्छा - भला (“आप भला तो जग भला”) ।

कोई बांध सीढ़ी आवे सामी, करे पोक पुकार ।
विरह वेदना अंग न माए, पीटे मांहें बाजार ॥१६॥

गाड़ें जालें हाथ अपने, रूदन करें जलधार ।
सनमंधी सब मिलके, टलवलें नर नार ॥१७॥

जनम होवे काहू के, काहू के होवे मरन ।
कोई हिरदे हँसे हरखे, कोई सोक रूदन ॥१८॥

धन खरचें खाएँ गफलतें, आपे बुजरक होए ।
कीरत अपनी कराए के, खेल या बिध होए ॥१९॥

कोई किरपी कोई दाता, कोई मंगन केहेलाए ।
किसी के अवगुन बोले, किसी के गुन गाए ॥२०॥

कोई मिने बेहेवारिए, कोई राने राज ।
कोई मिने रांक रलझले, रोते फिरें अकाज ॥२१॥

कोई पोंढ़े पलंग हेम के, कोई ऊपर ढोले वाए ।
बात करते जी जी करे, ए खेल यों सोभाए ॥२२॥

कोई बैठे सुखपाल में, कोई दौड़े उचाए[1] ।
जलेब आगे जोर चले, ए खेल यों खेलाए ॥२३॥

कोई बैठे तखतरवा, आगे तुरी गज पाएदल ।
अति बड़े बाजंत्र बाजे, जाने राज नेहेचल ॥२४॥

साम सामी करे सैन्या, भारथ[2] होवे लोह अंग ।
लज्या बांधे होवें टुकड़े, कहावें सूर अभंग ॥२५॥

कोई मिने होए कायर, छोड़ लज्या भाग जाए ।
कोई मारे कोई पकड़े, कोई गए आप बचाए ॥२६॥

कोई जीते कोई हारे, काहू हरख काहू सोक ।
जो तरफ सारी जीत आवे, ताए कहें पृथीपत लोक ॥२७॥

१. उठाकर । २. युद्ध ।

कोई करे ले कैद में, बांधत उलटे बंध ।
मारते अरवाह काढ़ें[1], ए खेल या सनंध ॥२८॥

जीते हरखे पौरसे[2], सूरातन[3] अंग न माए ।
हारे सारे सोक पावें, सो करें मुख त्राहे त्राहे ॥२९॥

कई फिरत हैं रोगिए, कई लूले टूटे अपंग ।
कई मिने आंधले, यों होत खेलमें रंग ॥३०॥

कई उदर कारने, फिरत होत फजीत ।
कई पवाड़े करें कोटल, ए होत खेल या रीत ॥३१॥

॥प्रकरण॥१३॥चौपाई॥३१०॥

खेल में खेल

अब दिखाऊं इन विध, जासों समझ सब होए ।
भेले हैं सत असत, सो जुदे कर देऊं दोए ॥१॥

इन खेलमें जो खेल है, सो केहेत न आवे पार ।
इन भेखोंमें भेख सोभहीं, सो कहूं नेक विचार ॥२॥

कई द्योहरे अपासरे, कई मुनारे मसीत ।
तलाव कुआ कुंड बावरी, मांहें विसामां[4] कई रीत ॥३॥

कई भेख जो साध कहावें, कई पंडित पुरान ।
कई भेख जो जालिम, कई मूरख अजान ॥४॥

कई अंन नीर सबीले, कई करें दया दान ।
कई तरपन तीरथ, कई करे नित अस्नान ॥५॥

कई कहावें दरसनी, धरें जुदे जुदे भेख ।
सुध आप ना पार की, हिरदे अंधेरी विसेख ॥६॥

कई लूचे कई मूंड़े, कई बढ़ावें केस ।
कई काले कई उजले, कई धरें भगुए भेस ॥७॥

१. प्राण लेना । २. पौरुष, शूरवीरता । ३. शौर्य (वीरता) । ४. विश्राम स्थल ।

कई नेक छेदें कई न छेदें, कई बोहोत फारें कान ।
कई माला तिलक धोती, कई धरें बैठे ध्यान ।।८।।

कई जिंदे मलंग मुल्ला, कई बांग दे मन धीर ।
कई जावें पाक होए, कई मीर पीर फकीर ।।९।।

कई लंगरी बोदले, कई आलम पढ़े इलम ।
कई ओलिए बेकैद सोफी, पर छोड़े नहीं जुलम ॥१०॥

कई सती सीलवंती, कई आरजा अरधांग ।
जती बरती पोसांगरी, ए अति सोभावे स्वांग ॥११॥

कई जुगते जोगी जंगम, कई जुगते सन्यास ।
कई जुगते देह दमे, पर छूटे नहीं जमफांस ॥१२॥

कई सिवी कई वैष्नवी, कई साखी समरथ ।
लिए जो सारे गुमाने, सब खेलें छल अनरथ ॥१३॥

कई श्रीपात ब्रह्मचारी, कई वेदिए वेदान्त ।
कई गए पुस्तक पढ़ते, परमहंस सिद्धांत ॥१४॥

कई अवतार तीर्थंकर, कई देव दानव बड़े बल ।
बुजरक नाम धराइया, पर छोड़े न काहू छल ॥१५॥

कई होदी[1] बोदी[2] पादरी, कई चंडिका चामंड ।
बिना हिसाबें खेलहीं, जाहेर छल पाखंड ॥१६॥

कई डिम्भ करामात, कई जंत्र मंत्र मसान ।
कई जड़ी मूली औखदी, कई गुटका धात रसान ॥१७॥

कई जुगतें सिध साधक, कई व्रत धारी मुन ।
कई मठ वाले पिंड पालें, कई फिरें होए नगिन ॥१८॥

कई खट चक्र नाड़ी पवन, कई अजपा अनहद ।
कई त्रिवेनी त्रिकुटी, जोती सोहं[3] राते सब्द ॥१९॥

१. हाथी के होदी में घूमने वाले । २. बौद्ध अथवा बोधि साधु । ३. सोडहम् - मंत्र में मग्न ।

कई संत जो महंत, कई देखीते दिगम्बर ।
पर छल ना छोड़े काहू को, कई कापड़ी कलंदर ॥२०॥

कई आचारी अप्रसी, कई करें कीरतन ।
यों खेलें जुदे जुदे, सब परे बस मन ॥२१॥

कई कीरतन करें बैठे, कई जाग जगन ।
कई कथें ब्रह्मग्यान, कई तपें पंच अगिन ॥२२॥

कई इन्द्री करें निग्रह, मन ल्याए कष्ट मोह ।
कई उर्ध ठाड़ेश्वरी, कई बैठे खुद होए ॥२३॥

कई फिरें देस देसांतर, कई करें काओस ।
कई कपाली अघोरी, कई लेवें ठंड पाओस ॥२४॥

कई पवन दूध आहारी, कई ले बैठत हैं नेम ।
कई कैद ना करे कछुए, ए सब छल के चेन[1] ॥२५॥

कई फल फूल पत्र भखी, कई आहार अलप ।
कई करें काल की साधना, जिया चाहें कलप ॥२६॥

कई धारा गुफा झांपा, कई जो गालें तन ।
कई सूके बिना खाए, कई करे पिंड पतन ॥२७॥

यों वैराग जो साधना, करें जुदे जुदे उपचार ।
यों चले सब पंथ पैंड़े, यों खेले सब संसार ॥२८॥

खेलें सब देखा देखी, ज्यों चले चींटी हार ।
यों जो अंधे गफलती, बांधे जाएँ कतार ॥२९॥

कोई ना चीन्हे आप को, ना चीन्हें अपनो घर ।
जिमी पैंड़ा ना सूझे काहूं, जात चले इन पर ॥३०॥

बाजीगर न्यारा रह्या, ए खेलत कबूतर ।
तो कबूतर जो खेल के, सो क्यों पावें बाजीगर ॥३१॥

१. चरित्र ।

अब देखो ले माएने, खेल बिना हिसाब ।
आप अकलें देखिए, ए रच्यो खसमें ख्वाब ॥३२॥

धरे नाम खसम के, जुदे जुदे आप अनेक ।
अनेक रंगे संगे ढंगे, बिध बिध खेलें विवेक ॥३३॥

खसम एक सबन का, नाहीं न दूसरा कोए ।
एह विचार तो करे, जो आप सांचे होए ॥३४॥

खेल खेलें अनेक रब्दें, मिनों मिने करें क्रोध ।
जैसे मछ गलागल, छोड़े न कोई व्रोध ॥३५॥

॥प्रकरण॥१४॥चौपाई॥३४५॥

पंथ पैंड़ों की खेंचा खेंच

कोई कहे दान बड़ा, कोई केहेवे ग्यान ।
कोई कहे विग्यान बड़ा, यों लरें सब उनमान ॥१॥

कोई केहेवे करम बड़ा, कोई केहेवे काल ।
कोई कहे साधन बड़ा, यों लरें सब पंपाल ॥२॥

कोई कहे बड़ा तीरथ, कोई कहे बड़ा तप ।
कोई कहे सील बड़ा, कोई केहेवे सत ॥३॥

कोई कहे विचार बड़ा, कोई कहे बड़ा व्रत ।
कोई कहे मत बड़ी, या विध कई जुगत ॥४॥

कोई कहे बड़ी करनी, कोई कहे मुगत ।
कोई कहे भाव बड़ा, कोई कहे भगत ॥५॥

कोई कहे कीरतन बड़ा, कोई कहे श्रवन ।
कोई कहे बड़ी वंदनी, कोई कहे अरचन ॥६॥

कोई कहे ध्यान बड़ा, कोई कहे धारन ।
कोई कहे सेवा बड़ी, कोई कहे अरपन ॥७॥

कोई कहे संगत बड़ी, कोई कहे बड़ा दास ।
कोई कहे विवेक बड़ा, कोई कहे विश्वास ।।८।।

कोई कहे स्वांत बड़ी, कोई कहे तामस ।
कोई कहेवे पन बड़ा, यों खेलें परे परबस ।।९।।

कोई कहे सदा सिव बड़ा, कोई कहे आद नारायन ।
कोई कहे आदें आद माता, यों लरें तानों तान ॥१०॥

कोई कहे आतम बड़ी, कोई कहे परआतम ।
कोई कहे अहंकार बड़ा, जो आद का उतपन ॥११॥

कोई कहे सकल व्यापी, देखी तां सब ब्रह्म ।
कोई कहे ए न लह्या, यों लरें भूले भरम ॥१२॥

कोई कहे सुन्य बड़ी, कोई कहे निरंजन ।
कोई कहे निरगुन बड़ा, यों लरें वेद वचन ॥१३॥

कोई कहे आकार बड़ा, कोई कहे निराकार ।
कोई केहेवे तेज बड़ा, यों लरें लिए विकार ॥१४॥

कोई कहे पारब्रह्म बड़ा, कोई कहे पुरसोतम ।
यों वेद के वाद अंधकारे, करें लड़ाई धरम ॥१५॥

जाहिर झूठा खेलहीं, हिरदे अति अंधेर ।
कहें हम सांचे और झूठे, यों फिरें उलटे फेर ॥१६॥

पंथ सारों की एह मजल, अनेक विध वैराट ।
ए जो विगत खेल की, सब रच्यो छल को ठाट ॥१७॥

कोई हेम गले अगनी जले, कोई भैरव करवत ले ।
खसम को पावे नहीं, जो तिल तिल काटे देह ॥१८॥

भेख जुदे जुदे खेल हीं, जाने खेल अखंड ।
ए देत देखाई सब फना, मूल बिना ब्रह्मांड ॥१९॥

खसम एक सबन का, नाहीं न दूसरा कोए ।
ए विचार तो करे, जो आप सांचे होए ॥२०॥
खेलें सब बेसुध में, कोई बोल काढ़े विसाल ।
उतपन सारी मोह की, सो होए जाए पंपाल ॥२१॥
बिना दिवालें[1] लिखिए, अनेक चित्रामन ।
सो क्यों पावे खुद को, जाको मूल मोह सुंन ॥२२॥
अनेक किव इत उपजे, वैराट सचराचर ।
ए छल मोहोरे छल को, खेलत हैं सत कर ॥२३॥

॥प्रकरण॥१५॥चौपाई॥३६८॥

वैराट का कोहेड़ा

वैराट का फेर उलटा, मूल है आकास ।
डारें पसरी पाताल में, यों कहे वेद प्रकास ॥१॥
फल डारें अगोचर, आड़ी अंतराए पाताल ।
वैराट वेद दोऊ कोहेड़ा, गूंथी सो छल की जाल ॥२॥
विध दोऊ[2] देखिए, एक नाभ[3] दूजा मुख[4] ।
गूंथी जालें दोऊ जुगतें, मान लिए दुख सुख ॥३॥
कोहेड़े दोऊ दो भांत के, एक वैराट दूजा वेद ।
जीव जालों जाली बांधे, कोई जाने न छल भेद ॥४॥
देखलावने तुम को, कोहेड़े किए ए ।
बताए देऊं आंकड़ी, छल बल की है जेह ॥५॥
आंकड़ी एक इन भांत की, बांधी जोर सों ले ।
आतम झूठी देखहीं, सांची देखें देह ॥६॥
करें सगाई देह सों, नहीं आतमसों पेहेचान ।
सनमंध पालें इनसों, ए लई सबो मान ॥७॥

१. दिवार (आधार) । २. वैराट तथा वेद । ३. नाभि कमल से ब्रह्माजी तथा ब्रह्माजी से वैराट । ४. चारों मुखों से चारों वेद का गायन ।

नहवाए चरचे[1] अरगजे[2], प्रीतें जिमावें पाक ।
सनेह करके सेवहीं, पर नजर बांधी खाक ।।८।।

जीव गया जब अंग थें, तब अंग हाथों जालें ।
सेवा जो करते सनेह सों, सो सनमंध ऐसा पालें ।।९।।

हाथ पांऊं मुख नेत्र नासिका, सब सोई अंग के अंग ।
तिन छूत लगाई घर को, प्यार था जिन संग ॥१०॥

अंग सारे प्यारे लगते, खिन एक रह्यो न जाए ।
चेतन चले पीछे सो अंग, उठ उठ खाने धाए ॥११॥

सनमंधी जब चल गया, अंग वैर उपज्या ताए ।
सो तबहीं जलाए के, लियो सो घर बटाए ॥१२॥

छोड़ सगाई आतम की, करें सगाई आकार ।
वैराट कोहेड़ा या बिध, उलटा सो कई प्रकार ॥१३॥

कई बिध यों उलटा, वैराट नेत्रों अंध ।
चेतन बिना कहे छूत लागे, फेर तासों करे सनमंध ॥१४॥

एक भेख जो विप्र का, दूजा भेख चंडाल ।
जाके छुए छूत लागे, ताके संग कौन हवाल ॥१५॥

चंडाल हिरदे निरमल, खेले संग भगवान ।
देखलावे नहीं काहू को, गोप[3] राखे नाम ॥१६॥

अंतराए नहीं खिन की, सनेह सांचे रंग ।
अहनिस दृष्ट आतम की, नहीं देहसों संग ॥१७॥

विप्र भेख बाहेर दृष्टी, खट कर्म पाले वेद ।
स्याम खिन सुपने नहीं, जाने नहीं ब्रह्म भेद ॥१८॥

उदर कुटम कारने, उत्तमाई देखावे अंग ।
व्याकरण वाद विवाद के, अर्थ करें कई रंग ॥१९॥

१. चंदन का लेप लगाना । २. इत्तर आदि लगाना । ३. गुप्त रखना ।

अब कहो काके छुए, अंग लागे छोत ।
अधम तम विप्र अंगे, चंडाल अंग उद्दोत ॥२०॥

पेहेचान सबों को देह की, आतम की नहीं दृष्ट ।
वैराट का फेर उलटा, इन बिध सारी सृष्ट ॥२१॥

एक देखो ए अचंभा, चाल चले संसार ।
जाहेर है ए उलटा, जो देखिए कर विचार ॥२२॥

सांचे को झूठा कहें, और झूठे को कहें सांच ।
सो भी देखाऊं जाहेर, सब रहे झूठे रांच ॥२३॥

आकार को निराकार कहें, निराकार को आकार ।
आप फिरे सब देखें फिरते, असत यों निरधार ॥२४॥

मूल[1] बिना वैराट खड़ा, यों कहे सब संसार ।
तो ख्वाब के जो दम आपे, ताए क्यों कहिए आकार ॥२५॥

आकार न कहिए तिनको, काल को जो ग्रास ।
काल सो निराकार है, आकार सदा अविनास ॥२६॥

जिन राचो मृग जल दृष्टे, जाको नाम प्रपंच ।
ए छल मायाऐं किया, ऐसे रचे उलटे संच ॥२७॥

॥प्रकरण॥१६॥चौपाई॥३९५॥

वेद का कोहेड़ा

अब कहूं कोहेड़ा वेद का, जाकी मिहीं गूंथी जाल ।
याकी भी नेक केहेके, देऊं सो आंकड़ी टाल ॥१॥

वैराट आकार ख्वाब का, ब्रह्मा सो तिनकी बुध ।
मन नारद फिरे दसों दिसा, वेदें बांध किए बेसुध ॥२॥

लगाए सब रब्दें, व्याकरण वाद अंधकार ।
या बुधें बेसुध हुए, विवेक खाली विचार ॥३॥

१. बिना आधार के (नीचे जल, उपर शून्य) अर्थात् अंतरिक्ष में ।

बंध बांधे या विध, हर वस्त के बारे नाम ।
सो बानी ले बड़ी कीनी, ए सब छल के काम ।।४।।

लुगे लुगे के जुदे माएने, द्वादस के प्रकार ।
उलटाए मूल माएने, बांधे अटकलें अपार ।।५।।

अर्थ को डालने उलटा, अनेक तरफों ताने ।
मूढ़ों को समझावने, रेहेस बीच में आने ।।६।।

ऐसी कई आंकड़ियों मिने, बोलें बारे तरफ ।
रेहेस रंचक धरें बीचमें, समझाए ना किन हरफ ।।७।।

बारे तरफों बोलत, एक अखर[1] एक मात्र ।
ऐसे बांध बतीस श्लोक में, बड़ा छल किया है सास्त्र ।।८।।

बारे मात्र एक अखर, अखर श्लोक बतीस ।
छल एते आड़े अर्थके, और खोज करें जगदीस ।।९।।

अर्थ आड़े कई छल किए, तिन अर्थों में कई छल ।
अखरा[2] अर्थ भी ना होवहीं, किया भाव अर्थ अटकल ॥१०॥

जाको नामै संस्कृत, सो तो संसे ही की कृत ।
सो अर्थ दृढ़ क्यों होवहीं, जो एती तरफ फिरत ॥११॥

सो पढ़े पंडित जुध करें, एक काने को टुकड़े होए ।
आपसमें जो लड़ मरें, एक मात्र ना छोड़ें कोए ॥१२॥

ए वाद बानी सिर लेवहीं, सुध बुध जावे सान ।
त्रास स्वांत न होवे सुपने, ऐसा व्याकरण ग्यान ॥१३॥

ए बानी ले बड़ी कीनी, दियो सो छल को मान ।
सो खेंचा खेंच ना छूटहीं, लिए क्रोध गुमान ॥१४॥

ए छल पंडित पढ़हीं, ताए मान देवें मूढ़ ।
बड़े होए खोले माएने, एह चली छल रूढ़ ॥१५॥

१. वर्ण, शब्द । २. अक्षर ।

सीधी इन भाखा मिने, माएने पाइए जित ।
जो सब्द सब समझहीं, सो पकड़ें नहीं पंडित ॥१६॥

एक अर्थ न कहें सीधा, ए जाहेर[1] हिंदुस्तान[2] ।
अर्थ को डालने उलटा, जाए पढ़ें छल बान ॥१७॥

ए खेल जाको सोई जाने, दूजा खेल सारा छल ।
ए छल के जीव न छूटे छल थें, जो देखो करते बल ॥१८॥

एक उरझन वैराट की, दूजी वेद की उरझन ।
ए नेक कही मैं तुमको, पर ए छल है अति घन ॥१९॥

मुख उदर के कोहेड़े, रचे मिने सुपन ।
ए सुध काहू न परी, मिने झीलें मोह के जन ॥२०॥

वैराट वेदों देख के, बूझ करी सेवा एह ।
देव जैसी पातरी, ए चलत दुनियां जेह ॥२१॥

ए जो बोले साधू सास्त्र, जिनकी जैसी मत ।
ए मोहोरे उपजे मोहके, तिनको ए सब सत ॥२२॥

तबक चौदे देखे वेदों, निराकार लों वचन ।
उनमान आगे केहेके, फेर पड़े मांहें सुंन ॥२३॥

ए देखो तुम जाहेर, पांचों उपजे तत्व ।
ए मोह मिने मन खेलहीं, सब मन की उतपत ॥२४॥

ए सारों में व्यापक, थावर और जंगम ।
सबन थें एक है न्यारा, याको जाने सृष्टब्रह्म ॥२५॥

दसों दिसा भवसागर, देखत एह सुपन ।
आवरण गिरद मोह को, निराकार कहावे सुंन ॥२६॥

ए इंड सारा कोहेड़ा, खेल चौदे भवन ।
सुर असुर कई अनेक भांते, हुआ छल उतपन ॥२७॥

१. सीधी सादी (प्रगट) । २. हिन्दुस्तानी भाषा ।

वनस्पति पसु पंखी, आदमी जीव जंत ।
मच्छ कच्छ सबसागर, रच्यो एह प्रपंच ॥२८॥

जीवों मिने जुदी जिनसें, कहियत चारों खान ।
थावर जंगम मिलके, लाख चौरासी निरमान ॥२९॥

कोई बैकुंठ कोई जमपुरी, कोई स्वर्ग पाताल ।
सब खेलें ख्वाबी पुतले, आड़ी मोह सागर पाल ॥३०॥

जो बनजारे[1] खेल के, तिन सिर जम को डंड ।
कोइक दिन स्वर्ग मिने, पीछे नरक के कुंड ॥३१॥

लाठी तेरे लोक पर, संजमपुरी सिरदार ।
जो जाने नहीं जगदीस को, तिन सिर जम की मार ॥३२॥

ए छल बनज छोड़ के, करे बैकुंठ वेपार ।
ए सत लोक इनका, कोई गले निराकार ॥३३॥

तबक चौदे इंड में, जिमी जोजन[2] कोट पचास ।
पहाड़ कुली अष्ट जोजन, लाख चौसठ बास ॥३४॥

पांच तत्व छठी आतमा, सास्त्र सबों ए मत ।
यों निरमान बांध के, ले सुपन किया सत ॥३५॥

देखे सातों सागर, और देखे सातों लोक ।
पाताल सातों देखिया, जागे पीछे सब फोक[3] ॥३६॥

॥प्रकरण॥१७॥चौपाई॥४३१॥

प्रकरण अवतारों का

ए ऐसा था छल अंधेर, काहूं हाथ ना सूझे हाथ ।
बंध पड़े दृष्ट देखते, तामें आया सारा साथ ॥१॥

तो पिया मिने आए के, सब छुड़ाई सोहागिन ।
बोए के नूर प्रकासिया, बीज ल्याए मूल वतन ॥२॥

१. व्यापारी । २. चार कोस का । ३. बेकार, खाक ।

ए खेल किया तुम खातिर, तुम देखन आइयां जेह ।
खेल देख के चलसी, घर बातां करसी एह ।।३।।

तुम खेल देखन कारने, किया मनोरथ एह ।
ए माप्या तुम वास्ते, कोई राखूं नहीं संदेह ।।४।।

ए खेल सांचा तो देख्या, जो अखंड करूं फेर ।
पार वतन देखाय के, उड़ाऊं सब अंधेर ।।५।।

ए दसों दिस लोक चौद के, विचार देखे वचन ।
मोह सागर मथ के, काढ़े सो पांच रतन ।।६।।

पेहेले कहे मैं साथ को, इन पांचों के नाम ।
सुकदेव और सनकादिक, कबीर सिव भगवान ।।७।।

नारायन विष्णु एक अंग, लखमी याथें उतपन ।
एह समावे याही में, ए नहीं वासना अन[1] ।।८।।

और एक कागद काढ़िया, सुकदेवजी का सार ।
हदियों का कोहेड़ा, बेहदी समाचार ।।९।।

अवतार चौबीस विष्णु के, बैकुंठ थें आवें जाएँ ।
ए बिध जाहेर त्यों करूं, ज्यों सनंध सब समझाए ॥१०॥

अवतार एकैस इनमें, तिन आड़ा हुआ कल्पांत ।
और कहावें तीन बड़े, भी कहूं तिनकी भांत ॥११॥

अवतार एक श्रीकृष्ण का, मूल मथुरा प्रगट्या जेह ।
दीदार देवकी वसुदेव को, दिया चतुरभुज एह ॥१२॥

वचन कहे वसुदेव को, फिरे बैकुंठ अपनी ठौर ।
पीछे प्रगटे दोए भुजा, सो सरूप सनंध और ॥१३॥

वसुदेव गोकुल ले चले, ताए न कहिए अवतार ।
सो तो नहीं इन हद का, अखंड लीला है पार ॥१४॥

१. अन्य (अलग - अलग शक्ति) ।

ए कही सब तुम समझने, भानने मनकी भ्रांत ।
बेहद विस्तार है अति बड़ा, या ठौर आड़ा कल्पांत ॥१५॥

भी कहूं तुमें समझाए के, तुम भानो धोखा मन ।
अवतार सो अक्रूर संगे, जाए लई मथुरा जिन ॥१६॥

इनमें भी है आंकड़ी, बिना तारतम समझी न जाए ।
सो तुम दिल दे समझियो, नीके देऊं बताए ॥१७॥

सात चार दिन भेख लीला, खेले गोवालों संग ।
सात दिन गोकुल मिने, दिन चार मथुरा जंग ॥१८॥

धनक[1] भान गज मल मारे, तब हुए दिन चार ।
पछाड़ कंस वसुदेव छोड़े, या दिन थें अवतार ॥१९॥

अब आई बात हद की, हिसाब चौदे भवन ।
सब बात इत याही की, कहे अटकलें और वचन ॥२०॥

जुध किया जरासिंधसों, रथ आयुध आए खिन मांहें ।
तब कृष्ण विष्णु मय भए, बैकुंठ में विष्णु तब नांहें ॥२१॥

बैकुंठ थें जोत फिर आई, सिसुपाल किया हवन ।
मुख समानी श्रीकृष्ण के, यों कहे वेद वचन ॥२२॥

किया राज मथुरा द्वारका, बरस एक सौ और बार ।
प्रभास सब संघार के, जाए खोले बैकुंठ द्वार ॥२३॥

गोप हुता दिन एते, बड़ी बुध का अवतार ।
नेक अब याकी कहूं, ए होसी बड़ो विस्तार ॥२४॥

कोइक काल बुध रास की, लई ध्यान में सकल ।
अब आए बसी मेरे उदर, वृध[2] भई पल पल ॥२५॥

अंग मेरे संग पाई, मैं दिया तारतम बल ।
सो बल ले वैराट पसरी, ब्रह्मांड कियो निरमल ॥२६॥

१. धनुष । २. बढ़ी ।

दैत कालिंगा मार के, सब सीधा होसी तत्काल ।
लीला हमारी देखाए के, टालसी जम की जाल ॥२७॥

दैत ऐसा जोरावर, देखो व्याप रह्या वैराट ।
काम क्रोध अहंकार ले, सब चले उलटी बाट ॥२८॥

याको संघारसी एक सब्दसों, बेर ना होसी लगार ।
लोक चौदे पसरसी, इन बुध सब्दको मार ॥२९॥

वैराट सारा लोक चौदे, चले आप अपनी मत ।
मन माने खेलें सब कोई, ग्रास लिए असत ॥३०॥

मैं मारूं तो जो होए कछुए, ना खमें[1] हरफ की डोट[2] ।
मेरी बुधें एक लवे से, ऐसे मरे कोटान कोट ॥३१॥

उठी है बानी अनेक आगम, याको गोप है उजास ।
वैराट सनमुख होयसी, बुध नूर के प्रकास ॥३२॥

चलसी सब एक चालें, दूजा मुख ना बोले वाक ।
बोले तो जो कछू होए बाकी, फोड़ उड़ायो तूल आक ॥३३॥

अब एह वचन कहूं केते, देसी दुनियां को उद्धार ।
मेरे संग आए बड़ी निध पाई, सो निराकार के पार ॥३४॥

पार बुध पाए पीछे, याको होसी बड़ो मान ।
अछर नेक ना छोड़े न्यारी, ए उदयो नेहेचल भान[3] ॥३५॥

अवतार जो नेहेकलंक को, सो अश्व अधूरो रह्यो ।
पुरूख देख्यो नहीं नैनों, तुरी को कलंकी तो कह्यो ॥३६॥

अवतार या बुध के पीछे, अब दूसरा क्यों कर होए ।
विकार काढ़े विश्व के, सब किए अवतार से सोए ॥३७॥

अवतार से उत्तम हुए, तहां अवतार का क्या काम ।
जहां जमे हुआ सब का, दूजा नेक न राख्या नाम ॥३८॥

१. सहन कर सके । २. चोट । ३. सूर्य ।

जहां पैए पाए पार के, हुआ नेहेचल नूर प्रकास ।
तित अगिए अवतार में, क्या रह्या उजास ॥३९॥

समझियो तुम या बिध, अवतार ना होवे अन ।
पुरूख तो पेहेले ना कह्यो, विचार देखो वचन ॥४०॥

॥प्रकरण॥१८॥चौपाई॥४७१॥

गोकुल लीला

जिन किनको धोखा रहे, जुदे कहे अवतार ।
तो ए किनकी बुधें विष्णु को, जगाए पोहोंचाए पार ॥१॥

सुकें अवतार सब कहे, पर बुध में रह्या उरझाए ।
ए भी सीधा न कहे सक्या, तो क्यों इन कही जाए ॥२॥

ए तो अछरातीत[1] की, लीला हमारी जेह ।
पेहेले संसा सबका भान के, पीछे भी नेक कहूं बिध एह ॥३॥

वैराट की बिध कही तुमको, जिन कछू राखों संदेह ।
अखंड गोकुल और प्रतिबिंब, ए भी समझाऊं दोए ॥४॥

ए खेल देख्या तो सांचा, जो अखंड करूं इन बेर ।
पार वतन देखाय के, सब उड़ाऊं अंधेर ॥५॥

अंतराए नहीं एक खिन की, अखंड हम पे उजास ।
रास लीला श्रीकृष्ण गोपी, खेले सदा अविनास[2] ॥६॥

प्रतिबिंब लीला या दिन थें, फेर के गोकुल आए ।
चले मथुरा द्वारका, बैकुंठ बैठे जाए ॥७॥

तारतम नूर प्रगट्या, तिन तेजें फोरयो आकास ।
लागी सिखर पाताल लो, अब रहे ना पकरयो प्रकास ॥८॥

किरना सबमें कुलांभियां[3], गयो वैराट को अग्यान ।
दृढ़ाए चित चौदे लोकको, उड़ाए दियो उनमान[4] ॥९॥

१. अक्षरातीत धनी । २. अखंड । ३. फैल गई । ४. अटकल ।

अब जोत पकरी ना रहे, बीच में बिना ठौर ।
पसरके देखाइया, बृज अखंड जो और ॥१०॥

बताए देऊं बिध सारी, बृज बस्यो जिन पर ।
अग्यारा बरस लीला करी, रास खेल के आए घर ॥११॥

गोकुल जमुना त्रट भला, पुरा ब्यालीस बास ।
पुरा पासे एक लगता, ए लीला अखंड विलास ॥१२॥

बास बस्ती बसे घाटी, तीन खूने गाम ।
कांठे पुरा टीवा ऊपर, उपनंद का ए ठाम ॥१३॥

तरफ दूजी पुरे सारे, बीच बाट धेन का सेर ।
इत खेले नंद नंदन, संग गोवालों के घेर ॥१४॥

पुरा पटेल सादूल का, बसे तरफ दूजी ए ।
तरफ तीसरी वृखभानजी, बसे नाके तीनों ले ॥१५॥

नंदजी के पुरे सामी, दिस पूरव जमुना त्रट ।
छूटक छाया वनस्पति, बृध आड़ी डालों बट ॥१६॥

सकल बन छाया भली, सोभित जमुना किनार ।
अनेक रंगे बेलियां, फल सुगंध सीतल सार ॥१७॥

तीन पुरे तीन मामों के, बसे ठाट बस्ती मिल ।
आप सूरे तीनों ही, पुरे नंद के पाखल[१] ॥१८॥

गांगा चांपा और जेता, ए मामा तीनों के नाम ।
दखिन दिस और पछिम दिस, बसे फिरते गाम ॥१९॥

नंदजी के आठ मंदिर, मांडवे एक मंडान ।
पीछे वाड़े गौओं के, तामें आथ[२] सर्वे जान ॥२०॥

रेत झलके आंगने, दूध चरी चूल्हा आगल ।
आईजी इन ठौर बैठें, और बैठें सखियां मिल ॥२१॥

१. पीछे । २. धन, पशु पक्षी ।

मंदिर मोदी तेजपाल को, इत चरी चूल्हा पास ।
कोइक दिन आए रहे, याको मथुरा में बास ॥२२॥

सरूप दस इत आरोगें, पाक साक अनेक ।
भागवंती बाई भली पेरे, रसोई करे विवेक ॥२३॥

लाड़लो नंद जसोमती, रोहिनी बलभद्र बाल ।
पालक पुत्र कल्यानजी, वाको पुत्र गोपाल ॥२४॥

बेहेने दोऊ जीवा रूपा, भेलियां रहें मोहोलान ।
और बाई भागवंती, नारी घर कल्यान ॥२५॥

पुरो जो वृखभान को, भेलो भाई लखमन ।
नंदजी के उत्तर दिसे, बसत बास पूरन ॥२६॥

सरूप साते भली भांते, आरोगें अंन पाक ।
कल्यान बाई रसोई करे, विध विध के बहु साक ॥२७॥

राधाबाई पिता वृखभानजी, प्रभावती बाई मात ।
सुदामा कल्यानजी, याथें छोटो कृष्णजी भ्रात ॥२८॥

कल्याण बाई नारी सुदामा, अंग धरत अति बड़ाई ।
करत हांसी कई भांतें, याकी स्यामसों सगाई ॥२९॥

मंदिर छे मांडवे आगे, चरी चढ़े दूध माट ।
स्यामा गोद प्रभावती, ले बैठत हैं खाट ॥३०॥

मांगा[1] किया राधाबाई का, पर ब्याहे नहीं प्राणनाथ[2] ।
मूल सनमंधे एके अंगे, विलसत वल्लभ साथ ॥३१॥

घुरसे[3] गोरस हेत में, घर घर होत मथन ।
खेले सब में सांवरो, मिने बाहेर आंगन ॥३२॥

पुरे सारे बीच चौरे, बैठे गोप बूढ़े भराए ।
चारों पोहोर गोठ घूघरी, खेलते दिन जाए ॥३३॥

१. मंगनी । २. प्रीतम, श्रीकृष्ण । ३. मथन ।

और सबे गौचारने, गोप गोवाला जाए बन ।
भोर के बन संझा लों, यों होत बृज वरतन ॥३४॥

तेजपाल मोदी वलोट पूरे, जो कछू चाहिए सोए ।
घृत लेवे बड़े बड़े ठौरों, और बिरतिया[1] होए ॥३५॥

घोलिए इत घोल करने, आवत बृज में जे ।
फेर जाए रहे मथुरा, वस्त भाव ले दे ॥३६॥

स्याम संग गोवाल ले, खेलत जमुना घाट ।
विनोद में हम आवें जाएँ, जल भरने इन बाट ॥३७॥

विलास बृज में पियाजीसों, बरतत एह बात ।
वचन अटपटे वेधें सब को, अहनिस एही तात ॥३८॥

पिउ प्रेमें भीगा खेलहीं, पुरे सारो मांहें ।
खेले खिन जासों ताए दूजा, सूझे नहीं कछु क्यांहें ॥३९॥

हम संग खेलें कई रंगे, जाते जमुना पानी ।
आठों पोहोर अटकी अंगे, एह छब एह बानी ॥४०॥

घर घर आनंद उछव, उछरंग अंग न माए ।
विलास विनोद पिया संगे, अह निस करते जाए ॥४१॥

सुंदर बालक मधुरी बानी, घर ल्यावें गोद चढ़ाए ।
सेज्याऐं खिन में प्रेमें पूरा, सुख देवें चित चाहे ॥४२॥

बाछरू ले बन पधारे, आठवें दसवें दिन ।
कबूं गोवरधन फिरते, मांहें खेलें बारे बन ॥४३॥

अखंड लीला अहनिस, हम खेलें पिया के संग ।
पूरे पिउजी मनोरथ, ए सदा नवले रंग ॥४४॥

श्री राज बृज आए पीछे, बृज वधू मथुरा ना गई ।
कुमारका संग खेल करते, दान लीला यों भई ॥४५॥

१. सनमंध कराने वाला ।

खेल खेलें कुमारका, चीले[1] कुल अभ्यास ।
दूध दधी छोटे बासन, करे रंग रस बन विलास ॥४६॥

बृज वधू मिने खेलने, संग केतिक जाए ।
सांवरो इत दान लेने, करे आड़ी लकुटी ताए ॥४७॥

दूध दधी माखन ल्यावें, हम पियाजी के काज ।
तित दधी हमारा छीन के, देवें गोवालों को राज ॥४८॥

भाग जांए गोवाल न्यारे, हम पकड़ राखें पिउ पास ।
पीछे हम एकांत पिया संग, करें बन में विलास ॥४९॥

कुमारका हम संग रेहेती, पिउ खेलते सखियन ।
मूल सनमंध कुमारकाओं का, या दिन थें उतपन ॥५०॥

अखंड लीला अति भली, नित नित नवले रंग ।
इन जोतें सब जाहेर किया, हम सखियां पिया के संग ॥५१॥

आवे जब उजालियां, हम खेलें लेकर ढ़ोल ।
पिया करें विनोद हांसियां, सो कहे न जाए बोल ॥५२॥

उलसे गोकुल गाम सारा, हेत हरख अपार ।
धन धान वस्तर भूखन, द्रव्य अखूट भंडार ॥५३॥

जनम व्याह नित प्रते, सारे पुरे अनेक होए ।
नेक कारज करे कछुए, तो बुलावे सब कोए ॥५४॥

नाटारंभ कई बाजंत्र, धन खरचें अहीर उमंग ।
साथ सब सिनगार कर, हम आवें अति उछरंग ॥५५॥

बलगें[2] विनोदें[3] हमसों, देखते सब जन ।
पर कोई न विचारे उलटा, सब कहे एह निसन[4] ॥५६॥

बात याकी हम जाने, और जाने हमारी एह ।
ना समझे कोई दूसरा, ए अंदर का सनेह ॥५७॥

१. प्रथा । २. लिपटे । ३. प्रेम से । ४. बालक ।

ए होत है हम कारने, पिया पूरे मनोरथ मन ।
इन समें की मैं क्यों कहूं, साथ सबे धंन धंन ॥५८॥

बृज सारी करी दिवानी, और पिया तो वचिखिन ।
जहां मिले तहां एही बातें, विनोद हांस रमन ॥५९॥

नंद जसोदा गोवाल गोपी, धेन बछ जमुना बन ।
थिर चर सब पसु पंखी, नित नित लीला नौतन ॥६०॥

अब ए लीला कहूं केती, अलेखे अति सुख ।
बरस अग्यारे खेले प्रेमें, सखियनसों सनमुख ॥६१॥

एक दिन गौ चारने, पिउ पोहोंचे वृन्दावन ।
गोवाल गौ सब ले वले, पीछे जोग माया उतपन ॥६२॥

ए लीला यामें एते दिन, कालमाया को ब्रह्मांड ।
एह कल्पांत करके, फेर उपज्यो अखंड ॥६३॥

सदा लीला जो बृज की, मैं कही जो याकी बिध ।
अब कहूं वृन्दावन की, ए तो अति बड़ी है निध ॥६४॥

॥प्रकरण॥१९॥चौपाई॥५३५॥

जोगमाया को प्रकरण

अब जोत पकरी न रहे, दूजा बेधिया[1] आकास[2] ।
जाए लिया इंड तीसरा, जहां अखंड रजनी रास ॥१॥

इन दोऊ[3] थें न्यारा मंडल, जाको कहियत हैं रास ।
तहां खेल स्याम सखियन का, ए लीला अविनास ॥२॥

या ठौर जोगमाया रच्यो, सब सामग्री समेत ।
तहां हद सब्द न पोहोंचही, तुमे तो भी कहूं संकेत ॥३॥

जिनस जुगत कहूं केती, अनेक सुख अखंड ।
जोगमायाए उपाया, कोई सुख सरूपी ब्रह्मांड ॥४॥

१. वेध कर, फोडकर । २. शून्य - निराकार । ३. कालमाया के ब्रह्मांड में खेली गई ११वर्ष ५२ दिन की व्रज लीला तथा ११. दिन की भेष लीला ।

ए बानी नीके विचारियो, अंतर मांहें बाहेर ।
तुमें जगाऊं कर जागनी, देखाए देऊं जाहेर ।।५।।

क्योंए न आवे सब्द में, जोगमाया की बिध ।
तो भी देखाऊं कछुयक[1], लीला हमारी निध ।।६।।

हम देखे वृन्दावन इतथें, तहां भी खेलें पिया साथ ।
करें विनोद नित नए, बनही मिने विलास ।।७।।

काहूं न पाइए जोगमाया की, हम बिना पेहेचान ।
वासना पांचों अछर की, भले कहावें आप सुजान ।।८।।

ए माया हमारियां, याके हमपे विचार ।
और उपजे सब इनथें, ए हमारी आग्या-कार ।।९।।

रासलीला पेहेले करी, जो मिने वृन्दावन ।
आनंद-कारी जोगमाया, अविनासी उतपन ॥१०॥

जोगमाया की जुगत जुई, एक रस एक रंग ।
एक संगे सदा रेहेना, अंगना एकै अंग ॥११॥

आतम सदीवे[2] एक है, वासना एकै अंग ।
मूल आवेस जोगमाया पर, सुख अखंड के रंग ॥१२॥

एक अंगे रंगे संगे, तो क्यों हुई अंतराए ।
इन सब्द में है आंकड़ी, बिना तारतम समझी ना जाए ॥१३॥

आंकड़ी अंतरध्यान की, सो ए कहूं सनंध ।
कोई न जाने हम बिना, इन तारतम के बंध ॥१४॥

जगाए आवेस लेयके, तब इत भए अंतरध्यान ।
विलास विरह चित चौकस करने, याद देने घर धाम ॥१५॥

जोगमाया की जुगत, और न जाने कोए ।
और कोई तो जाने, जो कोई दूसरा होए ॥१६॥

१. थोड़ा सा । २. सदा से ।

जोगमायाए जाग्रत होए, जल जिमी वाए अगिन ।
थिर चर सब पसु पंखी, तत्व सबे चेतन ॥१७॥

एक जरा तिन जिमी का, ताके तेज आगे सूर कोट ।
सो सूरज दृष्टें न आवहीं, इन जिमी जरे की ओट ॥१८॥

हेम जवेर के बन कहूं, तो ए सब झूठी वस्त ।
सोभा जो अविनास की, कही न जाए मुख हस्त ॥१९॥

बरनन करूं एक पात की, सो भी इन जुबां कही न जाए ।
कोट ससि जो सूर कहूं, तो एक पात तले ढंपाए ॥२०॥

सुतेज ससि बन पसु पंखी, तत्व सबें सुतेज ।
सुतेज थिर चर जो कछू, सुतेज रेजा रेज ॥२१॥

किरना बन जिमीय की, सामी किरना ससि प्रकास ।
नूर हम पे खेले नूर में, प्रेमें पियासों रास ॥२२॥

वस्तर भूखन इन जिमी के, सो मुख कहे न जाए ।
तो सुख इन सरूप के, क्यों कर इत बोलाए ॥२३॥

इन सुख बातां बोहोत हैं, सो नेक कह्यो प्रकास ।
पर ए भी जोगमाया मिने, जो कहियत हैं अविनास ॥२४॥

या ठौर लीला करके, हम घर आए सब मिल ।
या इंड कल्पांत करके, फेर अखंड किए मिने दिल ॥२५॥

हम तो सब धाम आए, अछर आपने घर ।
अखंड रजनी रास लीला, खेल होत या पर ॥२६॥

हमही खेले बृज रास में, हमही आए इत ।
घरों बैठे हम देखहीं, एही तमासा तित ॥२७॥

देखे बृज रास नीके, खेल किया पर[१] पर ।
ले भोग विरह विलास को, हम आए निज घर ॥२८॥

१. विभिन्न प्रकार से, भली भांति ।

देखे दोऊ सुख दुख, तो भी कछुक रह्यो संदेह ।
सत सरूपें तो फेर, मंडल रचियो एह ॥२९॥

ए खेल किया हम वास्ते, हम देखन आइयां एह ।
दोऊ के मनोरथ पूरनें, ए रच्या तमासा ले ॥३०॥

खेल रचे सुपन के, देखाए मिने सुपन ।
ए देखे हम न्यारे रहे, कोई और न देखे जन ॥३१॥

ए खेल सोहागनियों को, देखाया भली भांत ।
तारतम बुध प्रकास के, पूरी सबों की खांत ॥३२॥

खेल देख्या जो हम, सो थिर होसी निरधार ।
सारों मिने सिरोमन, होसी अखंड ए संसार ॥३३॥

भगवान जी आए इत, जागवे को तत्पर ।
हम उठसी भेले सबे, जब जासीं हमारे घर ॥३४॥

प्रकास कह्यो मैं रास को, एह सुन्यो तुम सार ।
अब महामती कहें सो सुनो, दया को विस्तार ॥३५॥

॥प्रकरण॥२०॥चौपाई॥५७०॥

दया को प्रकरण

अब तो मेरे पिया की, दया न समावे इंड ।
ए गुन मुझे क्यों विसरे, मोसों हुए सब अखंड ।
सोहागनियों पिया दया गुन कैसे कहूँ ॥टेक॥ ॥१॥

अब गली मैं दया मिने, सागर सरूपी खीर ।
दया सागर भर पूरन, एक बूंद नहीं मिने नीर ॥२॥

दया मुकट सिर छत्र चंवर, दया सिंघासन पाट ।
दया सबों अंगों पूरन, सब हुओ दया को ठाट ॥३॥

अब दया गुन मैं तो कहूं, जो कछू अंतर होए ।
अंगीकार[1] करी अंगना, सो देखे साथ सब कोए ।।४।।

पल पल आवे पसरती, न पाइए दया को पार ।
दूजा तो सब मैं मापिया, पर होए न दया को निरवार[2] ।।५।।

एते दिन हम घर मिने, गोप राखी सत जोत ।
अब बुध खेंचे तरफ अपनी, तो जाहेर सत होत ।।६।।

सब्द कोई कोई सत उठे, सो भी गए असतमें भिल[3] ।
सत असत काहू न सुध, दोऊ रहे हिल मिल ।।७।।

अब दूर करूं असत को, जाहेर करूं सत जोत ।
गोप रही थी एते दिन, सो अब होत उद्दोत ।।८।।

असत भी करना अखंड, करके सत प्रकास ।
सनंध सब समझाए के, करूं तिमर सब नास ।।९।।

संसा सारा भान के, उड़ाऊं असत अंधेर ।
निज बुध उठ बैठी हुई, गयो सो उलटो फेर ॥१०॥

अब फेर सब सीधा फिरे, सत आया सबों दृष्ट ।
पेहेचान भई प्रकास थें, सुपन की जाहेर सृष्ट ॥११॥

खेल देख्या कालमाया का, सो कालमाया में भिल ।
अब देखो सुख जागनी, होसी निरमल दिल ॥१२॥

आवेस मुझपे पिया को, तिन भेली करूं सोहागिन ।
सब सोहागिन मिल के, सुख लेसी मूल वतन ॥१३॥

विलास तब विध विध के, होसी हरख अपार ।
करसी आनंद विनोद, आवसी सकुंडल सकुमार ॥१४॥

आए रहेसी सब सोहागनी, तब लेसी सुख अखंड ।
पीछे तो जाहेर होएसी, तब उलटसी ब्रह्मांड ॥१५॥

१. स्वीकार । २. निर्णय । ३. मिलना ।

हिस्सा देऊं आवेस का, सैंयन को सब पर ।
होसी मनोरथ पूरन, मिल हरखे जागसी घर ॥१६॥

अब साथ न छोडूं एकला, साथ मुझे छोड़े क्यों ।
कह्या मेरा साथ न लोपे[१], साथ कहे करूं मैं त्यों ॥१७॥

लेस[२] है कालमाया को, बढ़्यो साथ में विकार ।
सो गालूं सीतल नजरों, दे तारतम को खार ॥१८॥

विकार काढूं विधोगतें[३], बढ़ाए दया विस्तार ।
भानूं भरम तिन भांतसों, ज्यों आल[४] न आवे आकार ॥१९॥

सुख देऊं मूल वतन के, कोई रच के भला रंग ।
मन वांछे मनोरथ, देऊं सुख सबों अंग ॥२०॥

मोह बढ़्यो लेस माया को, निद्रा मूल विकार ।
सुध होए सबों अंगों, कर देऊं तैसो विचार ॥२१॥

जोलों न काढूं विकार, तोलों क्यों करके जगाए ।
जागे बिना इन रास के, किन निज सुख लिए न जाए ॥२२॥

आमले उलटे मोह के, और मोह तो तिमर घोर ।
ए घोर रैन टालूं या बिध, ज्यों सब कोई कहे भयो भोर[५] ॥२३॥

गुन पख अंग इन्द्री उलटे, करत हैं सब जोर ।
सो सब टेढ़े टाल के, कर देऊं सीधे दोर ॥२४॥

अहंकार मन चित्त बुध, इन किए सब जेर ।
अब हारे सब जिताए के, फेरूं सो सुलटे[६] फेर ॥२५॥

प्रकृत सबे पिंड की, सीधी करूं सनमुख ।
दुख अगनी टाल के, देखाऊं ते अखंड सुख ॥२६॥

चोर फेर करूं बोलावे, सुख सीतल करूं संसार ।
अंग में सबों आनन्द, होसी हरख तुमे अपार ॥२७॥

१. टालना । २. असर । ३. तरीके से । ४. आलस । ५. प्रातः काल । ६. सीधा ।

कोईक दिन साथ मोह के जल में, लेहेर बिना पछटाने[1] ।
कहे महामती प्यारी मोहे वासना, ना सहूं मुख करमाने ॥२८॥

॥प्रकरण॥२१॥चौपाई॥५९८॥

हांसी का प्रकरण

मेरे साथ सनमंधी चेतियो, ए हांसी का है ठौर ।
पिउ वतन आप भूल के, कहा देखत हो और ॥१॥

साथ जी तुमको उपज्या, खेल देखन का ख्याल ।
जाको मूल नहीं बांधे तिन, ए हांसी का हवाल ॥२॥

मांग्या खेल विनोद का, तिन फेरे तुमारे मन ।
सो सब तुमको विसरे, जो कहे मूल वचन ॥३॥

गूंथो जाली दोरी बिना, आप बांधत हो अंग ।
अंग बिना तलफत हो, ए ऐसे खेल के रंग ॥४॥

आप बंधाने आप सों, इन कोहेड़े अंधेर ।
अमल चढ़्या जानों जेहेर का, फिरत वाही में फेर ॥५॥

अमल चढ़्या क्यों जानिए, कोई फिसले कोई गिरे ।
कोई मिने जाग के, कर पकर सीढ़ी चढ़े ॥६॥

एक गिरे पगथी बिना, वाको दूजी पकरे कर ।
सो खाए दोनों गड़थले, ए हांसी है या पर ॥७॥

एक पड़ी जिमी जान के, वाको दूजी उठावन जात ।
उलट पड़ी सो उलटी, ए खेल है या भांत ॥८॥

ओठा लेवे जिमी बिना, पांव बिना दोड़ी जाए ।
जल बिना भवसागर, यामें गलचुए[2] खाए ॥९॥

देखो अंत्रीख[3] खड़ियां, हाथ बिना हथियार ।
नींद बड़ी है जागते, पिंड बिना आकार ॥१०॥

१. पछड़ना । २. गोते खाना । ३. अधर में ।

एक नई कोई आए मिले, सो कहावे आप अजान ।
बड़ी होए दूजी मिने, समझावत सुजान ॥११॥

कोई वचन करड़े कहे, किन खण्डनी न खमाए ।
सो कलपे दोऊ कलकले, वाको अमल यों ले जाए ॥१२॥

खंडी खांड़ी रोए रोलाए, दुख देखे दोऊ जन ।
जागे पीछे जो देखिए, तो कमी न मांहें किन ॥१३॥

हांसी होसी साथ में, इन खेल के रस रंग ।
पूर बिना बहे जात हैं, कोई आड़ी होत अभंग ॥१४॥

हरखे हांसी हेत में, करसी साथ कलोल[1] ।
मांगी माया सो देखी नीके, कोई ना हांसी या तोल ॥१५॥

मूल बिना ए बिरिख खड़ा, ताको फल चाहे सब कोए ।
फेर फेर लेने दौड़ही, ए हांसी इन बिध होए ॥१६॥

ए खेल देख्या छल का, बैकुंठ लो पाताल ।
फल फूल पात ना दरखत, काष्ट तुचा मूल ना डाल ॥१७॥

खुले ना बंध बिना बांधे, बिध बिध खोले जाए ।
ए माया मोहोरे देख के, उरझ रहे सब मांहें ॥१८॥

जागो जगाऊं जुगत सों, छोड़ो नींद विकार ।
पेहेचान कराऊं पिउ सों, सुफल करूं अवतार ॥१९॥

वतन देखाऊँ पिउ का, और अपनी मूल पेहेचान ।
एह उजाला करके, धोखा देऊं सब भान[2] ॥२०॥

ए भोम हांसी देख के, आप होत सावचेत ।
मूल सुख कहे महामती, तुमको जगाए के देत ॥२१॥

॥प्रकरण॥२२॥चौपाई॥६१९॥

१. आनंद । २. मिटा देना ।

जागनी का प्रकरण

अब जाग देखो सुख जागनी, ए सुख सोहागिन जोग ।
तीन लीला चौथी घर की, इन चारों को यामें भोग ।।१।।

कह्या न जाए सुख जागनी, सत ठौर के सनेह ।
तो भी कहूं जिमी माफक, नेक प्रकासूं एह ।।२।।

अब जगाऊं जुगत सों, उड़ाऊं सब विकार ।
रंगे रास रमाए के, सुफल करूं अवतार ।।३।।

अब दुख ना देऊं फूल पांखड़ी, देखूं सीतल नैन ।
उपजाऊं सुख सब अंगों, बोलाऊं मीठे बैन ।।४।।

आगे कलकली कलकलाए, तोहे ना गयो विकार ।
कठिन सही तुम खंडनी, वचन खांडा धार ।।५।।

सो ए वचन मोहे सालहीं, कठिन तुमको जो कहे ।
सोहागनियों को निद्रा मिने, मूल घर विसर गए ।।६।।

अब गालूं ताओ दिए बिना, करूं सो रस कंचन ।
कस चढ़ाऊं अति रंगे, दोऊ पेर करूं धंन धंन ।।७।।

जानूं साथजी विदेस आए, दुख देखे कई भांत ।
जो लों ना इत सुख पावहीं, तो लों ना मोहे स्वांत ।।८।।

नैन चढ़ाए साथ न जागे, यों न जागनी होए ।
मूल घर देखाइए, तब क्यों कर रेहेवे सोए ।।९।।

खंडनी कर खीजिए, जागे नहीं इन भांत ।
दीजे आप ओलखाए के, यों साख देवाए साख्यात ॥१०॥

जगाऊं सुख याद देने, करूं आप अपनी बात ।
पीछे हम तुम मिलके, जाहेर कीजे विख्यात ॥११॥

आगे आवेस मोपे पिया को, दे अंग लई जगाए ।
निसंक निद्रा उड़ाए के, साख्यात लई बैठाए ॥१२॥

अब रह्यो न जाए नेक न्यारे, यों किए जागनी ले ।
अहंमेव जाग्या धाम का, हम मिने आया जे ॥१३॥

पेहेले जोगमाया भई रास में, ताको सो अति उजास ।
पर साथ जोग होसी जागनी, ताको कह्यो न जाए प्रकास ॥१४॥

अब विछोहा खिन एक साथ को, सो मैं सह्यो न जाए ।
अब नेक वाओ इन माया की, जानों जिन आवे ताए ॥१५॥

साथजी इन जिमी के, सुख देऊं अति अपार ।
हँस हँस हेते हरख में, तुम नाचसी निरधार ॥१६॥

प्रीतम मेरे प्राण के, अंगना आतम नूर ।
मन कलपे खेल देखते, सो ए दुख करूं सब दूर ॥१७॥

मुख करमाने मन के, सो तुमारे मैं ना सहूं ।
ए दुख सुख को स्वाद देसी, तो भी दुख मैं ना देऊं ॥१८॥

सत सुख में सुख देयसी, इन जिमी के दुख जेह ।
तुम हंसोगे हरख में, रस देसी दुखड़ा एह ॥१९॥

हम उपाया सुख कारने, ए जो मांग्या खेल तुम ।
दुख दे वतन बोलावहीं, ए इन घर नहीं रसम ॥२०॥

सेहेजल[1] सुख तुमें है सदा, अलप नहीं असुख ।
तुम सुख को स्वाद लेने, खेल मांग्या ए दुख ॥२१॥

खेल मांग्या दुख का, तब कह्या हम तुम ।
दुख का खेल तुमको, क्यों देखावें हम ॥२२॥

दुख तो क्योंए देऊं नहीं, तो खेल देख्या क्यों जाए ।
खंत लगी खरी खेल की, तिनको सो एह उपाए ॥२३॥

१. सहज, आसान ।

पिया हम खेल जान्या घरका, ज्यों खेल करत सदाए ।
हम खेल खड़े यों देखसी, ए भी इन अदाए ॥२४॥

वस्तोगते[1] दुख ना कछू, जो पीछे फेरो दृष्ट ।
जो देखो वचन जागके, तो नाहीं कछुए कष्ट ॥२५॥

लगोगे जो दुख को, तो दुख तुमको लागसी ।
याद करो जो निज सुख, तो दुख तुमथें भागसी ॥२६॥

फेर देखो जो नजरों, तो रेहेसी न्यारे दुख ।
करोगे इत खेल रंगे, विनोद बातें मुख ॥२७॥

सागर सुख में झीलते, तहां दुख नहीं प्रवेस ।
तो दुख तुम मांगिया, सो देखाया लवलेस ॥२८॥

पौढ़े भेले जागसी भेले, खेल देख्या सबों एक ।
बातां करसी जुदी जुदी, बिध बिध की विसेक ॥२९॥

दुख तुमारे मैं न सहूं, सो जानो चित्त चौकस ।
ए दुख देसी बोहोत सुख, खेल होसी रंग रस ॥३०॥

साथ को इन जिमी के, सुख देने को हरख अपार ।
रासमें रंग खेल के, भेले जागिए निरधार ॥३१॥

अब ल्योरे मेरे साथ जी, इन जिमी ए सुख ।
मैं तुमारे न सेहे सकों, जो देखे तुम दुख ॥३२॥

लेहेर लगे तुमें मोह की, सो आतम मेरी न सहे ।
अब खंडनी भी न करूं, जानों दुखाऊं क्यों मुख कहे ॥३३॥

अब क्यों देऊं कसनी, मुख करमाने[2] न सहूं ।
तिन कारन सब्द कठन, मेरे प्यारों को मैं क्यों कहूं ॥३४॥

अब तारूं तुमें या बिध, ज्यों लगे न लेहेर लगार ।
सुखपाल में बैठाए सुखें, घर पोहोंचाऊं निरधार ॥३५॥

१. वास्तविक । २. मुरझाया ।

उपजाए देऊं अंग थें, रस प्रेम के प्रकार ।
प्रकास पूरन करके, सब टालूं रोग विकार ॥३६॥

अंग दिए बिना आवेस, नाहीं प्रेम उपाए ।
आवेस दे करूं जागनी, लेऊं अंग में मिलाए ॥३७॥

अब भेले तो सब चलिए, जो अंग न काहूं अटकाए ।
तो तुमें होवे जागनी, जो सांचवटी बटाए ॥३८॥

अब दुख आवे तुमको, तहां आड़ा देऊं मेरा अंग ।
सुख देऊं भली भांतसों, ज्यों होए न बीच में भंग ॥३९॥

ए लीला करूं इन भांतें, तो रास रंग खेलाए ।
बिध बिध के सुख विलसिए, विरह जागनी सह्यो न जाए ॥४०॥

जगाए नीके सुख देऊं, रेहेस खेलाऊं रंग ।
सत सुख क्यों आवहीं, जोलों ना दीजे अंग ॥४१॥

अंगना को अंग दीजिए, अंगना लीजे अंग ।
पास देऊं पूरा प्रेम का, नेहेचल[1] का जो रंग ॥४२॥

असतसों उलटाए के, सतसों कराऊं संग ।
परआतम सों बंध बांधूं, ज्यों होए ना कबहूं भंग ॥४३॥

पिउ जगाई मुझे एकली, मैं जगाऊं बांधे जुथ ।
ए जिमी झूठी दुख की, सो कर देऊं सत सुख ॥४४॥

सब साथ करूं आपसा, तो मैं जागी प्रमान ।
जगाए सुख देऊं धाम के, मिलाए मूल निसान ॥४५॥

आवेस जाको मैं देखे पूरे, जोगमाया की नींद होए ।
पर जो सुख दीसे जागनी, हम बिना न जाने कोए ॥४६॥

जो जाग बैठे धाम में, ताए आवेस को क्या कहिए ।
तारतम तेज प्रकास पूरन, तिनथें सकल बिध सुख लहिए ॥४७॥

१. अखंड ।

आवेस को नहीं अटकल, पर जागनी अति भारी ।
आवेस जागनी तारतमें, जो देखो जाग विचारी ॥४८॥

ए पैए बतावे पार के, नहीं तारतम को अटकल ।
आवेस जागनी हाथ पिया के, एह हमारा बल ॥४९॥

तारतम के सुख साथ आगे, बिध बिध पियाने कहे ।
पीछे ए सुख इंद्रावती को, दया कर सारे दिए ॥५०॥

धंन पिया धंन तारतम, धंन धंन सखी जो ल्याई ।
धंन धंन सखी मैं सोहागनी, जो मो में ए निध आई ॥५१॥

पिया ल्याए मुझ कारने, और हुआ न काहूं जान ।
मैं लिया पिया विलसिया, विस्तारिया प्रमान ॥५२॥

ए बानी सबमें पसरी, पर किया न साथे विचार ।
पीछे दया कर दई धनिएँ, अंग इंद्रावती विस्तार ॥५३॥

बोहोत धन ल्याए धनी धामथें, बिध बिध के प्रकार ।
सो ए सब मैं तोलिया, तारतम सबमें सार ॥५४॥

तारतम का बल कोई न जाने, एक जाने मूल सरूप ।
मूल सरूप के चित्त की बातें, तारतम में कई रूप ॥५५॥

साख्यात सरूप इंद्रावती, तारतम को अवतार ।
वासना होसी सो बलगसी[1], इन वचन के विचार ॥५६॥

सरूप साथकी पेहेचान, तारतममें उजास ।
जोत उद्दोत प्रगट पूरन, इंद्रावती के पास ॥५७॥

वासनाओं की पेहेचान, बानी करसी तिन ताल[2] ।
निसंक[3] निद्रा उड़ जासी, सुनते ही तत्काल ॥५८॥

एक लवा सुने जो वासना, सो संग न छोड़े खिन मात्र ।
होसी सब अंगों गलित गात्र, प्रगट देखाए प्रेम पात्र ॥५९॥

१. लिपटेंगे (एकाकार होना) । २. समय । ३. बेशक ।

ए बानी सुनते जिनको, आवेस न आया अंग ।
सो नहीं नेहेचे वासना, ताको करूं जीव भेलो संग ॥६०॥

वासना जीव का बेवरा[1] एता, ज्यों सूरज दृष्टें रात ।
जीव का अंग सुपनका, वासना अंग साख्यात ॥६१॥

भी बेवरा वासना जीवका, याके जुदे जुदे हैं ठाम ।
जीव का घर है नींद में, वासना घर श्री धाम ॥६२॥

ना होए नया न पुराना, श्री धाम इन प्रकार ।
घटे बढ़े नहीं पत्र एक, सत सदा सर्वदा सार ॥६३॥

जो किन जीवे संग किया, ताको करूं ना मेलो भंग ।
सो रंगे भेलूं वासना, वासना सत को अंग ॥६४॥

तारतम तेज प्रकास पूरन, इंद्रावती के अंग ।
ए मेरा दिया मैं देवाए, मैं इंद्रावती के संग ॥६५॥

इंद्रावती के मैं अंगे संगे, इंद्रावती मेरा अंग ।
जो अंग सौंपे इंद्रावती को, ताए प्रेमें खेलाऊं रंग ॥६६॥

बुध तारतम जित भेले, तित पेहेले जानो आवेस ।
अग्या दया सब पूरन, अंग इंद्रावती प्रवेस ॥६७॥

सुख देऊं सुख लेऊं, सुख में जगाऊं साथ ।
इंद्रावती को उपमा, मैं दई मेरे हाथ ॥६८॥

मैं दया तुमको करी, जो देखो नैना खोल ।
ना खोलो तो भी देखोगे, छाया निकसी ब्रह्मांड फोड़ ॥६९॥

ए खेल देख्या बैठे घर, अग्याऐं सैयों नजर ।
जब अंतर आंखां खुली, तब दृष्ट घर की घर ॥७०॥

निज नैना देऊं खोलके, ज्यों आड़ी न आवे मोह सृष्ट ।
होसी पेहेचान सत सुख, निज वतन देखो दृष्ट ॥७१॥

१. फर्क (ब्योरा - विवरण) ।

तारतम का जो तारतम, अंग इन्द्रावती विस्तार ।
पैए देखावे पार के, तिन पार के भी पार ॥७२॥

ब्रह्मांड दोऊ अखंड किए, तामें लीला हमारी ।
तीसरा ब्रह्मांड अखंड करना, ए लीला अति भारी ॥७३॥

तीन लीला माया मिने, हम प्रेमें विलसी जेह ।
ए लीला चौथी विलसते, अति अधिक जानी एह ॥७४॥

एक सुख सुपनके, दूजे जागते ज्यों होए ।
तीन लीला पेहेले ए चौथी, फरक एता इन दोए ॥७५॥

पेहेले दृष्टें हमारे जो आइया, तेते मिने उजास ।
हम खेलें तिन उजासमें, और लोक सब को नास ॥७६॥

अब लोक चौदे तरफ चारों, प्रकास होसी साथ जोग ।
जीव सबको जगाए के, टालूं सो निद्रा रोग ॥७७॥

हम जाहेर होए के चलसी, सब भेले निज घर ।
वैराट होसी सनमुख, एक रस सचराचर ॥७८॥

जब हम जाहेर हुए, सुध होसी संसार ।
दुनियां सारी दौड़सी, करने को दीदार ॥७९॥

हम सदा संग पिया के, जो रूहें सोहागिन ।
सो अग्यांऐं उठ बैठसी, सब अपने वतन ॥८०॥

अव्वल सब सोहागनी, एक ठौर पिया पास ।
सबों सुख होसी सोहागनी, रंग रस प्रेम विलास ॥८१॥

जो जोत होसी जागनी, ए नूर बिना हिसाब ।
लोक चौदे पसरसी, तब उड़ जासी ए ख्वाब ॥८२॥

ए बानी तो करूं जाहेर, जो करना सबों एक रस ।
वस्त देखाए बिना, वैराट न होवे बस ॥८३॥

वैराट बस किए बिना, क्यों कर होए अखंड ।
हम खेल देख्या इछाए कर, सो भंग ना होए ब्रह्मांड ॥८४॥

अनेक आगे होएसी, इन बानी को विस्तार ।
ए नेक कह्या मैं करने, अखंड ए संसार ॥८५॥

ए बानी कही मैं जाहेर, सो विस्तरसी विवेक ।
मैं गुझ कही है साथ को, पर सो है अति विसेक ॥८६॥

संसार सब के अंग में, मेरी बुध को करूं प्रवेस ।
असत सब होसी सत, मेरे नूर के आवेस ॥८७॥

बुध मूल अछर[1] की, आई हमारे पास ।
जोगमाया को ब्रह्मांड, तिन हिरदे था रास ॥८८॥

ए हुती पिया चरने, दिन एते गोप ।
वचन कोई कोई सत उठे, सोए करूं क्यों लोप ॥८९॥

बृज रास में हम रमे, बुध हती रास में रंग ।
अब आए जाहेर हुई, इत उदर मेरे संग ॥९०॥

इंद्रावती पिया संगे, उदर फल उतपन ।
एक निज बुध अवतरी, दूजा नूर तारतम ॥९१॥

दोऊ सरूप प्रगटे, लई मिनों मिने बाथ ।
एक तारतम दूजी बुध, देखसी सनमुख साथ ॥९२॥

अछर[1] केरी[2] वासना, कहे जो पांच रतन ।
कागद ल्याया बेहद का, सुकदेव मुनी धंन धंन ॥९३॥

विष्णु मन खेल ले खड़ा, पकड़ के दोऊ पार ।
भली भांत भेले विष्णु के, सनकादिक थंभ चार ॥९४॥

महादेवजीऐं बृज लीला, ग्रह्यो अखंड ब्रह्मांड ।
अछर चित सदासिव, ए यों कहावे अखंड ॥९५॥

१. अक्षरब्रह्म । २. की ।

कबीर साख जो पूरने, ल्याया सो वचन विसाल[1] ।
प्रगट पांचो ए भए, दूजे सागर आड़ी पाल ॥९६॥

हम बुध नूर प्रकास के, जासी हमारे घर ।
बैकुंठ विष्णु जगावसी, बुध देसी सारी खबर ॥९७॥

खबर देसी भली भांतें, विष्णु जागसी तत्काल ।
तब आवसी नींद इन नैनों, प्रलेय होसी पंपाल[2] ॥९८॥

अछर खेल इछाए कर, छर[3] रच के उड़ात ।
वासना पांचों पोहोंचे इत, ए सत मंडल साख्यात ॥९९॥

पांचो बुध ले वले पीछे, तामें बुध विसेक विचार ।
अछर आंखां खोलसी, होसी हरख अपार ॥१००॥

लीला तीनों थिर होएसी, अखंड इन प्रकार ।
निमख एक ना विसरसी, रेहेसी दिल में सार ॥१०१॥

उत्तम भी कहूं इनमें, जहां तारतम को विस्तार ।
वासना पांचों बुध ले, साख पूरसी संसार ॥१०२॥

मेरी संगते ऐसी सुधरी, बुध बड़ी हुई अछर ।
तारतमें सब सुध परी, लीला अंदर की घर ॥१०३॥

मेरे गुन अंग सब खड़े होसी, अरचासी[4] आकार ।
बुध वासना जगावसी, तिन याद होसी संसार ॥१०४॥

बुध तारतम लेयके, पसरसी वैराट के अंग ।
अछर[5] हिरदे या बिध, अधिक चढ़सी रंग ॥१०५॥

॥प्रकरण॥२३॥चौपाई॥७२४॥

निज बुध भेली नूर में, अग्या मिने अंकूर ।
दया सागर जोस का, किन रहे न पकरयो पूर ॥१॥

१. बड़े । २. झूठ । ३. क्षर, विनाश । ४. पूजें जाएंगे । ५. अक्षर ब्रह्म ।

ए लीला है अति बड़ी, आई या इंड मांहें ।
कई हुए कई होएसी, पर किन ब्रह्मांडों नांहें ।।२।।

ए अगम[१] अकथ[२] अलख[३], सो जाहेर करें हम ।
पर नेक नेक प्रकासहीं, जिन सेहे न सको तुम ।।३।।

जो कबूं कानो ना सुनी, सो सुनते जीव उरझाए ।
ताथें डरती मैं कहूं, जानूं जिन कोई गोते खाए ।।४।।

नातो सब जाहेर करूं, नाहीं तुम सों अंतर ।
खेंच खेंच तो केहेती हूं, सो तुमारी खातिर ।।५।।

तुम दुख पाया मुझे सालहीं, अब सुख सब तुम हस्तक ।
दिया तुमारा पावहीं, दुनियां चौदे तबक ।।६।।

अजूं केहेती सकुचों, पर बोहोत बड़ी है बात ।
सोभा पाई तुम याथें बड़ी, जो पिया वतन साख्यात ।।७।।

इंड अखंड भी जाहेर, किए जागनी जोत ।
अब सुन्य फोड़ आगे चली, जहां थें इंड पैदा होत ।।८।।

सोभा इन मंडल की, क्यों कर कहूं वचन ।
सो बुध नूर जाहेर करी, जो कबूं सुनी न कही किन ।।९।।

रास बरनन भी ना हुआ, तो अछर बरनन क्यों होए ।
कही न जाए हद में, पर तो भी कहूं नेक सोए ॥१०॥

जोगमाया तो माया कही, पर नेक न माया इत ।
ख्वाबी दम सत होवहीं, सो अछर की बरकत ॥११॥

ताथें कालमाया जोगमाया, दोऊ पल में कई उपजत ।
नास करे कई पल में, या चित्त थिर थापत ॥१२॥

तहां एक पलक न होवहीं, इत कई कल्प वितीत ।
कई इंड उपजे होए फना, ऐसे पल में इन रीत ॥१३॥

१. जहां पहुंच न हो । २. अकथनीय । ३. शब्दातीत ।

जागते ब्रह्मांड उपजे, पाव पल में अनेक ।
सो देखे सब इत थें, बिध बिध के विवेक ॥१४॥

ए लीला है अति बड़ी, दृष्टें उपजे ब्रह्मांड ।
ए खेल खेले नित नए, याकी इछा है अखंड ॥१५॥

ए मंडल है सदा, जाए कहिए अछर ।
जाहेर इत थें देखिए, मिने बाहेर थें अंतर ॥१६॥

उतपन देखी इंड की, न अंतर रत्ती रेख ।
सत वासना असत जीव, सब विध कही विवेक ॥१७॥

मोह उपज्यो इतथें, जो सुन्य निराकार ।
पल मीच ब्रह्मांड किया, कारज कारन सार ॥१८॥

मोह अग्यान भरमना, करम काल और सुंन ।
ए नाम सारे नींद के, निराकार निरगुन ॥१९॥

मन पोहोंचे इतलो, बुध तुरिया[1] वचन ।
उनमान[2] आगे केहेके, फेर पड़े मांहे सुंन ॥२०॥

जो जीव होसी सुपन के, सो क्यों उलंघे सुंन ।
वासना सुन्य उलंघ के, जाए पोहोंचे अछर वतन ॥२१॥

ए सबे तुम समझियो, वासना जीव विगत ।
झूठा जीव नींद न उलंघे, नींद उलंघे वासना सत ॥२२॥

सुपने नगरी देखिए, तिन सब में एक रस ।
आपै होवे सब में, पांचों तत्व दसो दिस ॥२३॥

तिनमें भी दोए भांत है, एक वासना दूजे जीव ।
संसा न राखूं किनका, मैं सब जाहेर कीव ॥२४॥

देखो सुपनमें कई लड़ मरें, सबे आपे पर ना दुखात ।
जब देखें मारते आपको, तब उठे अंग धुजात[3] ॥२५॥

१. चित्त । २. अटकल । ३. कांपते हुए ।

वासना उतपन अंग थें, जीव नींद की उतपत ।
कोई ना छोड़े घर अपना, या बिध सत असत ॥२६॥

ब्रह्मांड चौदे तबक, सब सत का सुपन ।
इन दृष्टांतें समझियो, विचारो वासना मन ॥२७॥

सुपन सत सरूप को, तुम कहोगे क्यों कर होए ।
ए बिध सब जाहेर करूं, ज्यों रहे न धोखा कोए ॥२८॥

एक तीर खेंच के छोड़िए, तिन बेधाए कई पात ।
सो पात सब एक चोटें, पाव पल में बेधात ॥२९॥

पर पेहेले पात एक बेध के, तो दूजा बेधाए ।
यामें सुपन कई उपजें, बेर एती भी कही न जाए ॥३०॥

तो बेर एक की कहा कहूं, इत हुआ कहां सुपन ।
पर सत ठौर का असत में, दृष्टांत नहीं कोई अन ॥३१॥

इत भेले रूह नूर बुध, और अग्या दया प्रकास ।
पूरों आस अछर की, मेरा सुख देखाए साख्यात ॥३२॥

इत भी उजाला अखंड, पर किरना न इत पकराए ।
ए नूर सब एक होए चल्या, आगूं अछरातीत समाए ॥३३॥

ए नूर आगे थें आइया, अछर ठौर के पार ।
ए सब जाहेर कर चल्या, आया निज दरबार ॥३४॥

वतन देखाया इत थें, सो केते कहूं प्रकार ।
नूर अखंड ऐसा हुआ, जाको वार न काहूं पार ॥३५॥

किए विलास अंकूर थें, घर के अनेक प्रकार ।
पिया सुंदरबाई अंग में, आए कियो विस्तार ॥३६॥

ए बीज वचन दो एक, पिया बोए कियो प्रकास ।
अंकूर ऐसा उठिया, सब किए हाँस विलास ॥३७॥

सूर ससि कई कोट कहूं, नूर तेज जोत प्रकास ।
ए सब्द सारे मोहलों, और मोह को तो है नास ॥३८॥

अब इन जुबां मैं क्यों कहूं, निज वतन विस्तार ।
सब्द ना कोई पोहोंचहीं, मोह मिने हुआ आकार ॥३९॥

मोह सो जो ना कछू, इनसे असंग बेहद ।
सत को असत ना पोहोंचहीं, या बिध ना लगे सब्द ॥४०॥

बेहद को सब्द ना पोहोंचहीं, तो क्यों पोहोंचे दरबार ।
लुगा न पोहोंच्या रास लों, इन पार के भी पार ॥४१॥

कोट हिस्से एक लुगे के, हिसाब किया मिहीं कर ।
एक हिस्सा न पोहोंच्या रास लों, ए मैं देख्या फेर फेर ॥४२॥

मैं अंगे रंगे अंगना संगे, करूं आप अपनी बात ।
अब बोलते सरमाऊं, ताथें कही न जाए निध साख्यात ॥४३॥

वतन बातें केहेवे को, मैं देखती नहीं कोई काहूं ।
देखां तो जो होए दूसरा, नहीं गांउं नांउं न ठांऊं ॥४४॥

जहां नहीं तहां है कहे, ए दोऊ मोह के वचन ।
ताथें विस्तार अन्दर, बाहेर होत हूं मुंन[1] ॥४५॥

एता भी मैं तो कह्या, जो साथ को भरम का घैन[2] ।
वचन दो एक केहेके, टालूं सो दुतिया चैन[3] ॥४६॥

साथ के सुख कारने, इंद्रावती को मैं कह्या ।
ताथें मुख इंद्रावती के, कलस सबन का भया ॥४७॥

॥प्रकरण॥२४॥चौपाई॥७७१॥

प्रकरण तथा चौपाइयों का संपूर्ण संकलन
प्रकरण १७२, चौपाई ४६६९

॥ कलस हिन्दुस्तानी - तौरेत[4] सम्पूर्ण ॥

१. मौन, चुप । २. नशा, बेहोशी । ३. द्वैत भाव । ४. तौरात - पहली आसमानी किताब ।